

कवि-श्री माला

• पञ्जाबी •

कवि

मार्क वीरसिंह

सम्पादक—मनुवादक

प्रीतमसिंह पंछी



राष्ट्रमाषा प्रचार समिति, वर्धा

प्रकाशक

मोहनलाल भट्ट

मन्त्री

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

हिन्दीनगर, बर्धा

● ● ●

सर्वधिकार सुरक्षित

प्रथम संस्करण—१ ●

मई, १९६२

मूल्य—रु २/-

● ● ●

मुद्रक

मोहनलाल भट्ट

राष्ट्रभाषा प्रेस

हिन्दीनगर बर्धा

● ● ●

हर्षव्य विषय है कि राष्ट्रीय-प्रचार-समिति वर्षों अगले कार्य करने के २५ वर्ष सन् १९६१ में पूरे कर रही है। इस उपलक्ष्यमें मन्त्रालय खानेवाले रजत-जयन्ती महोत्सवके अवसर पर सभी भारतीय भाषाओंके माध्य कवियोंका तथा उनके उत्कृष्ट कव्यका परिचय कवि-श्री माधव' की पच्चीस पुस्तकोंने हिन्दी गद्यानुवाद सहित प्रकाशित करनेकी योजनाके अन्तर्गत प्रस्तुत ग्रन्थ पाठकोंके समक्ष आ रहा है।

यद्यपि किसी भी भाषाके सर्वोत्कृष्ट कव्य-सर्जकका निरूपण करना एक कठिन कार्य है फिर भी अपनी सीमाओंके ध्यानमें रखते हुए गण्यमान्य उक्त उक्त भाषाओंके विद्वानोंकी शक्ति की पुष्टि करने कार्य सम्पन्न किया गया है।

प्रत्येक पुस्तकके आरम्भमें जिस भाषाके कठिन रचनाओंका चयन किया गया है उस भाषाके साहित्यका परिचय और कवि विशेषका परिचय दिया गया है। जिस भाषाके टी कवियोंका चुनव किया गया है, उनका चुनाव करते समय सन् १९२० से पूर्वका साहित्य और १९२० से बादका साहित्य—इस तरहसे एक विभक्तिकारीका ध्यानमें रखी गई है। इसका कारण यह है कि लगभग सन् १९२ के पूर्वके तथा १९२० के बादके साहित्यमें प्रचलित विचार-धाराएँ एक विशेष प्रकारका अलगाव-सा पाया जाता है।

श्री प्रोफेसर ए. ए. ए. प्रस्तुत पुस्तकमें संकलित साहित्यकी चुनने कवियोंके सम्बन्धित तथा अनूदित का सभी सामग्रीको इस रूपमें प्रस्तुत करने सहयोग दिया है। पुस्तकमें संकलित चित्र श्री प्रोफेसर ए. ए. ए. सम्पादक 'मालमा मालमा' अनुसन्धके भोजनमें उपलब्ध हुआ है। संग्रहीत आधारित विज्ञानमें बहना देने की वही एक अकारणकी (हीन सर जे जे इन्स्टीट्यूट ऑफ अप्लाइड आर्ट, बम्बई) का उद्यम सहयोग मिला है उसके लिए समिति सभीकी आभारी है।

इसके अतिरिक्त कर्मा तथा अग्रगण्य दृष्टिकोने विज्ञान-विश्व प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष सहयोग मिला है उसके प्रति भी समिति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करती है।

आशा है प्रस्तुत संग्रह पाठकोंकी रुचिकर एवं उपयोगी प्रतीत होगा।

h. P. S. S. S. S.

अनुक्रमणिका

	पृष्ठांक
पञ्जाबी-साहित्य परिचय [प्रारम्भसे १९२० तक]	१
कवि-परिचय	२१
काव्य-सञ्चय	३३

ਕਬਿ-ਧੀ ਮਾਸਾ
ਪੰਜਾਬੀ



ਮਾਈ ਬੀਰਸਿੰਹ

पञ्जाबी साहित्य परिचय

[प्रारम्भसे १९२० तक]

पञ्जाबी भाषा और उसका साहित्य • • •

प्रारम्भिक काल (ई. सन् ८००-१४५० तक)

इस बातसे सभी विद्वान् सहमत हैं कि पञ्जाबी साहित्य अपन अधिकष्ठित रूपमें गुरु नानकदेवसे पूर्व जन्म ले चुका था किन्तु जो कविता उस समय रही थी उसमें हिन्दी, फ़ारसी तथा भिन्न-भिन्न प्रदेशोंके राज्योंकी इनकी भरमार थी कि उसकी भाषाकी हम एक निश्चयी जाया कह सकते हैं।

ऐसे कवियोंमें गोरखनाथ (ई. सन् ९४०-१०११) जयदेव (ई. सन् ८९०-९९) अर्धरत्न (ई. सन् १२५३-१३२५) तुषलक दाह और सुसरो लो करीब झकर गेज जाति प्रमुख कवि थे। इनके अलावा कबीर (ई. सन् १३९८-१५१९) रविदास (कबीरके समकालीन) और नामदेव (चौदहवीं सदी) की गणना भी इसी कवियोंमें की जा सकती है। उस समय उत्तर-भारतमें एक ऐसी लठ-भाषाका प्राबुध्विष्य था। चुका था जिसमें भिन्न-भिन्न प्रदेशोंके कवियोंकी एक मूलमें जोड़ दिया था। कबीर, नामदेव और रविदासका पञ्जाबसे कोई सम्बन्ध नहीं था किन्तु फिर भी उनकी रचनाओंमें उस समयकी प्रचलित पञ्जाबीकी प्रभाव स्पष्ट रूपसे दृष्टिगोचर होता है। इन तीनों कवियोंकी-कबीर, नामदेव और रविदास-कविगणें गुरु-ग्रन्थ साहबमें सम्मिलित हैं।

भाषाकी इस समानताका कारण यह था कि पञ्जाबके गोरखपन्थी सामु तथा बाबा फरीदके सिष्ययज्ञ दूर-दूरके प्रदेशोंमें फैले हुए थे। गोरखपन्थी सामु तो समस्त भारतमें फैले हुए थे।

बाबा फरीद धरकर संन (ई. सन् ११७३-१२६९) सूफ़ी साहित्यके प्रवर्तक मान जाते हैं। सूफ़ी कबीर भारतमें मुसलमानोंके आगमनके साथ ही आए थे। आरम्भमें इनका उद्देश्य इस्लामका प्रचार था। सूफ़ी मत हिन्दुओंके भक्ति-मार्ग तथा वेदान्तका मुसलमानी रूप है। इस मतका जन्म इस्लामके साथ ही हुआ गया था।

फरीद धरकर संन सूफ़ी कबीरोंमें अग्रणी थे। इनके स्लाक मुहम्मद साहबमें सम्मिश्रित हैं। उनमें परमात्माका भय रोज़ा-नमाज़ नरकका भय संसारसे वैराग्य तथा जप-उप द्वाय साधनाके प्रस्था की गई हैं। भाषा सीधी-सारी सरल तथा बरेलू उपमायोंसे ओत-मोत है। यद्यपि फरीद निराधाराही कवि हैं किन्तु उनकी कवितामें यथ-उप भाषाबाई तत्व भी मौजूद हैं।

पूबान्ध मुगल-काल (ई. सन् १४५०-१७०० तक)

मुहम्मद ग़ज़नवीसे पूर्वके साहित्यकी चर्चा हम कर चुके हैं किन्तु पञ्जाबी साहित्यका उत्तरोत्तर विकास सिख युद्धोंके समय हुआ भाषा तथा भाषाकी नया रूप मिला। इसी समय सर्वप्रथम गद्यकी भी रचना आरम्भ हुई। यह साहित्य तीन भूमियोंमें विभक्त था—सूफ़ी-स हिन्दू सिख-साहित्य तथा रामाष्टिक-साहित्य। इस समय भक्ति-आन्दोलन बहावपर था। इस आन्दोलनके प्रवर्तक तथा प्रचारक बनारसमें रामानन्द रमिदास तथा कबीर आदि थे। बदायून चर्खादास और चैतन्य महाप्रभु राजस्थानमें गीतबाई और बाबू महापद्ममें नामदेव तथा मुक्ताचम और पञ्जाबमें मिर गुरु थे।

सिख युद्ध जहाँ भक्ति-आन्दोलनके अविश्व भंग थे वहीं इनके कुछ दोषोंकी भी मिटाता चाहते थे। सिख तथा बौद्धोंके उपासना करमातोंका नाम और बाइबलका मिला बुद्धमोह डटकर खिराद किया। उन्होंने परमात्माकी भक्ति हठपूर्वक और मनकी मारकर नहीं बल्कि हमी बुनियामें रहन हुए मुख कर्मों द्वारा करनेका पाठ पढ़ाया। वे समस्त प्रकृति धरती मनुष्य जगत एक अग्नि तारे तथा आकाशकी परमात्माकी आरती उठाएत हुए देखते थे। इनसे जपन आपकी पृथक समझकर जी भक्तिका उपदेश देते थे उनका वे खिराद करते थे।

मिर्च घमैके प्रवर्तक गुरु नानकदेव (ई. सन् १४६९-१५३९) का कार्य-राज बड़ा विघाल था। उन्होंने लड़ासे कर्मरार, जमदसे पेगावर, बाबुल मरवा मरीना और बगदाद तक अपने धर्मका प्रचार किया। हिन्दू-मुसलमान दोनों धर्मके लिए समान थे। वे उस नई पञ्जाब नवजाके जगमगाता थे जो 'सन्त-भाषा'

(पञ्चाशी-हिन्दी मिश्रित भाषा) में किसी जाती थी। आपका ज्ञान विनाश था। धर्म दर्शन विज्ञान पुराण तथा प्राकृतिक वर्णनके उदाहरण आपकी कविता में मिलते हैं। बरेलू उपमार्ग, सरल और सादरी-श्रव्य धर्मन भावना तथा सर्पित आपकी कविताके विशेष अंग हैं। अपूर्वी सहज आपकी असाधारण काव्य-प्रतिभाका स्पष्टतम ममूना है। मुद्द मानक की कवितामें सरल भाषा द्वारा चहरे बिचारोंके व्यक्त करनेकी क्षमता विद्यमान है। कवितामें समय तथा भाषाका अधिकार इन्हें एक महान् कविके रूपमें हमारे सामने ला लाकर रखा है। इनके प्रत्येक वाक्यमें एक अटल सच्चाई निहित है और वे वाक्य एक मुहाबरेकी भाँति कष्टस्व हो जाते हैं। भक्ति-आन्दोलनके ये पहले ऐसे कवि हैं जिन्होंने आत्म-अन्वेषण विचारनके साध-साध अपने वर्तमान जीवनकी बनान-सँवारनकी प्रस्था हैं। बाहर बायीं में वे एक पीढ़ीका अनुभव करते हुए बाहरके आक्रमण तथा अत्याचारके विरुद्ध अपनी आवाज उठाते करते हैं —

“जिन सिरि सौहृदि एहीवां भागी पावें संघूर।
 से सिरि कटी मुनियन, पल बिच भाई बूझि।
 महिला अम्बर होंधिवां हुनि बहूनि न मिलनि हुरि।
 बरहु सौदां भीमाहिवां लाहे सौहृदि पावि।
 हीठ नि बहि काँधा बन्ध बंध कीठे रावि।
 उपरु पावो बारिष, ललै सिमकन पावि।”

मुद्द मानक सिर्फ समाधि लगाते और सिर्फ मासा ही नहीं अपते रह वे अपने ईर्ष्या-विरागों को लोकर देखते हैं तो उन्हें दिखाई देता है अत्याचार, अदरदस्ती, कत्ला-धान, लाल-धर्मका लोप और झूठका चारों ओर बोल-बासा। लेकिन मुद्द मानकका देश-प्रेम सिर्फ किनी एक भाँति या धर्म तक सीमित नहीं है। हिन्दू मुसलमान दोनोंपर ही रहे अत्याचारोंसे उनकी आत्मा दुःखमुता उठती है। ये हिन्दुओंकी पिछवटका मूल कारण उनकी वर्णमण्डल मतभूतिकी समझते हैं। कुछ राजा कसाई हैं जो भारत-वैसे देशकी मिट्टी में दिसा रहे हैं। लोगोंमें बहुपुराना घात-वक्त और रून-साहू भी महीं रह गया। वे मुहोंकी भाँति मुककर चलते हैं परपी भाषा बोलते हैं परपी पोशाक पहनते हैं। फिर ऐसे सर्वसत्त्वकी बुद्धिवा क्यों न हों। यह है उनकी अपने देशवासियोंकी पिछवटकी समझा और देशमें वर्तमान राजनीतिक दृष्टिपर टाँका तथा अत्याचारके विरुद्ध आवाज।

इन देशी मिट्टी इसके रज्जिगत मीमम तथा प्राकृतिक उदाहरण मुद्द मानकको प्रकृतिका महान् चित्रण बना दिया है। इन्होंने मनुष्य भाषाके एक-साय बँटन तथा एक-दूसरेके काम जानना या उपदेश दिया है वह हमी आमका सुधार करनेकी और एक संकट है। इन्होंने हँसते-खलने लाते-पीते वर्तमान-निष्ठ बनकर परमात्माकी उपमाका माप बताया है।

गुरु नामककी अधिकतर कविता यीति-रूपमें हैं। इनकी कवितामें सब रस मौजूद हैं। उपयुक्त शब्दोंका चयन वातावरण तथा अलङ्कार कविताके ऐसे बड़ाऊ मोटी हैं जिन्हें इन्होंने बड़ी मुश्किल और कीचलके साथ अपन धीमेमें बना है।

दूसरे गुरु अंनददेव (ई सन् १५४-१५५२) की बहुत बड़ी रचनाएँ मिली हैं। इन्होंने सिर्फ़ स्तोत्र लिखे हैं। इनकी कविताएँ एक ही विषय हैं कि सेवककी पुष्के साथ कैस प्रीति मिथानी चाहिए। आपकी कविता सरल है—आइन्वरसे कोसों दूर।

गुरु अमरदास (ई सन् १४७९-१५७४) अपनी कवितामें अनुप-मायकी एकता तथा गुरु बाणीकी अटल सच्चाईका उपदेश देते हैं। कृत-काण वात-वीथ छंद-प्रवा आदि बुराईयोंके विरुद्ध आपन औरदार आवाज उठाई है। गुरु नामककी मीठि आपकी कविता भी विविधतासे परिपूर्ण हैं।

गुरु रामदास (ई सन् १५३४-१५८१) की बाणीमें सिर्फ़ प्रेम-भावना है। मुस्के प्रति भक्ता और प्रसन्ना वर्णन आप बड़ी मिठासके साथ करते हैं। इनकी कविता के बाण्य छाया-रसाल लम्ब होते हैं किन्तु उनमें एक छय होती है जो हृदयको मुग्ध कर देती है। गुरु रामदास प्रीतिके कवि हैं। ये अनुप-मायकी परमात्माके छज्ज ली लपानकी प्ररणा देते हैं।

गुरु अर्जुनदेव (ई सन् १५६३-१६१९) की बाणीका संग्रह सारे मुबजोसि मिल है। इनकी कविताकी भाषा विषय लय ताल आदिमें विविधता पाई जाती है। आपकी भाषामें पञ्जाबक सबी प्रदेशोंका प्रभाव स्पष्ट रूपसे दृष्टिबोहर होता है। इनकी भाषामें संस्कृतके अलावा अरबी अरबी सिन्धी तथा राजस्थानी शब्दोंकी भरमार है। जहाँ गुरु नामकदेवने वर्णनमें संयमसे काम लिया है वहाँ आपकी कवितामें बिस्तार बहुत है। ज्ञान और प्रेमके विषयपर ही आपन अपने काव्यकी आधार-शिला रली है।

चाई बुरदास (ई सन् १५५८-१६३७) जीव गुरु रामदासके मर्न-अ थे। संस्कृत अरबी हिन्दीके आप प्रकाण्ड पण्डित थे। गुरु अर्जुनदेवत अब गुरु-ग्रन्थ साहबका संग्रह किया त उसके लिप्यर्नका भार आप पर लीपा। आपने पञ्जाबीमें उनशानीय बार * रचकर पञ्जाबी भाषा तथा काव्यके विकासमें अपुर्ब योगदान दिया है। आपन गुरु और शिष्यकी प्रीति शिष्य धर्मकी महिमा सेवा तथा विनम्रताके ऊपर लिखा है। आपकी कवितामें भिन्न-भिन्न धर्मोंका पुरान सम्बन्धी और प्रहृष्टिका ज्ञान यम-तम बिखरा पड़ा है। कवितामें शीघ्रकताके बमलार अधिक है भाव-उज्जालता कम है। इनके वर्णनमें संयम है।

* एक उन्म शिष्यमें बं-र-मायाएँ मिली जाती हैं।

गुरु गोविन्दसिंह (ई सन् १६६६-१७८) पञ्जाबीमें बहुत कम रचना की है। सिर्फ चण्डी की बार तथा कुछ हलोक उनके पञ्जाबी भाषामें मिल मिलते हैं। बापका बाकी सारा साहित्य ब्रजभाषा तथा प्राचीन हिन्दीमें है जिसमें फारसीका रङ्ग भी मिला हुआ है।

चण्डी की बार एक बीररस प्रधान काव्य है। इसमें दुमरिबी और शैत्येति मूढ़की कथा है। यह एक प्रभावशाली रचना है जिसे पञ्जर लठ्ठमें एक उबाला भा जाता है और ऐसा अनुभव होने लगता है मानो पढ़नेवाला स्वयं मूढ़ बनने लगा सब वैन रहा हो।

पञ्जाबी काव्य

पञ्जाबीमें कविताके विकासके साथ-साथ गद्यका भी जन्म हुआ। प्रारम्भिक कालमें महापुरुषोंकी जन्म-कबार्एँ, बोटियाँ तथा धार्मिक पुस्तकोंकी टीकाएँ लिखी गईं। गुरु नानकजी पड़ोसी जन्म-साखी (कथा) भाई बाले न जो गुरु नानकजी लिखी सेवक या दूसरे सिख गुरु अमरदेवसे लिखवाई। इस साखीके कई छप्पे अलगछप्पे संस्करण मिलते हैं। पर इसकी भाषा आजकी भाषाके इसनी निकट है कि इसके प्राचीन होनेमें सन्देह उत्पन्न होता है। सम्भव है कि लगभग तीन सौ वर्ष प्राचीन भाई बालेकी जन्म-साखीमें किसी मठाल सिख का मितावट कर दी हो। इसके सिख जानकी सिख सम्बत् १५९७ ईसाख मुदी पञ्जबी है।

जन्म-साखीका एक सम्स्करण बिलायत वाली जन्म-साखी कहलाता है। यह कालकुछ साहब न ईस्ट इण्डिया कम्पनीकी बेंट की थी। इनके कुछ छप्पोंको छोड़कर सब सारी कथाकी ईसो भाई बालेकी जन्म-साखीके साथ मेल खाती है। इस बिलयनी संस्करणके इन छप्पोंमें "बोली भाईजी गुरुजीकी फतह होई" यह मिश्र हीना है कि यह संस्करण गुरु गोविन्दसिंहके समयकी निर्मी प्राधान पाण्डित्यिसे नकल करके तैयार किया गया होया क्योंकि "बाह गुरुजीकी फतह" गुरु गोविन्दसिंहके समय ही प्रचलित था। इस जन्म-साखी में संयमपूर्ण दिगम और सरलता-भरा वर्णन एक अनूठा रस पैदा करता है।

जन्म-साखियों (कथाओं) के साथ-साथ गुरु नानकजी भिन्न-भिन्न स्थानों पर हुई गोटियाँ भी लेखकों द्वारा लिखी गई मिलती हैं। इन गोटियोंकी भाषा लिखड़ी भाषा है। इनके लेखकोंको व्याकरणका ज्ञान नहीं है। पर हाजलामा बारागिरीह और बाबालालकी वाली पुस्त भाषा उत्सवम दिवार और मयमित वर्णनके अतिरिक्त उदाहरण है।

सूफी तथा भक्ति-मार्गकी कविता

सूफी मार्ग सूफी मतके सम्बन्धमें हम बता आए हैं कि इस मतका जन्म भारतमें मुसलमानोंके आगमनके साथ-साथ हुआ। प्रारम्भमें यह मत सिर्फ इस्लामके प्रचार तक सीमित था। पञ्जाबी भाषामें इस मतके पहुँचे कवि राज फरीद थे। आय चलकर जब इस्लाम और हिन्दू धर्मका परस्पर मेल बढ़ा तो यहाँके रीति-रिवाज तथा धर्मोंका सूफी फकीरों पर प्रभाव पड़ना स्वाभाविक था। बीड धर्म वेदांत और सिख धर्मन सूफी मतपर गहरा प्रभाव डाला। इस मतके विरासतमें यह बूझती सीधी थी। न केवल सूफी कवियोंके विचारोंमें एक क्रांतिकारी परिवर्तन आया बल्कि इनके समूचे काव्यमें एक स्वदेशी रंग आ गया। सूफी कवियोंका काव्य निजी अनुभवों पर आधारित उत्पन्न हुआ।

साहू हुसैन (ई.सन् १५१८-१५९९) आहीरके रहनवासे थे। यह प्रसिद्ध कण्ठमाती फकीर थे। एक किम्बदन्ती है कि इनकी मित्रता एक हिन्दू लड़के माधोसाहके साथ हुई। जहाँ इसकी की हृदय तक पहुँच गई थी। इसलिये इनका नाम माधोसाह हुसैन प्रसिद्ध हुआ। यह अकबर और गुड बर्खुन्देवसे भी मिले थे। सज्जित और नृत्यका इन्हें बेहद शौक था। आहीरके शाहीमर बागके पास इनकी मजार है।

साहू हुसैन सूफी विचार-आपके प्रथम कवि थे। इनकी "कादियाँ" * प्रसिद्ध हैं। इनकी कविताक विषय हैं—विष्णोई प्रीति तथा वैराग्य। जहाँ सज्जित और माधुर्य इनकी कवितामें है वह पञ्जाबीके अन्य कितनी सूफी कवियों कवितामें नहीं मिलता।

फरीद जहाँ अपने धर्मके गहरा अनुयायी थे वहाँ साहू हुसैन बड़ेतबादी सूफी थे। इसलिये इनकी कविता संकीर्णताकी परिधिसे बाहर है। किसी भी धार्मिक बन्धनकी कड़ीमें ये नहीं हैं।

मुस्तान बाहू (ई.सन् १६२९-१६९०) अनुप्य और परमात्माकी एककपट के व्यक्त करनेमें जमास किया है। इनकी कवितामें साहू हुसैन जैसी रीति नहीं है बल्कि सादा और खरबार धर्मन है। भाषा केन्द्रीय पञ्जाबी है पर फरसीके प्रभावन उस और भी साहित्यासी बना दिया है। मुस्तान बाहूने स्वर्ग-नरक विद्या-बुद्धि तथा हरेक प्रकारके धार्मिक बन्धनोंके प्रति उपासीनता प्रकट की है। आत्म भीतर ध्यानकी प्रेरणा दी है।

साहू सरफ (ई.सन् १७२४) न अपने आपकी मारकर, पञ्जाबी जलकर प्रभ-व्याप्ता पंथका उपदेश दिया है। इनकी धर्मन-सीली सीधी-सादी और भाषा ठर है।

मल्लि-भार्य मुसलमान सूफी कवियोंके जमाना इस समय अनेक हिन्दी कवियों भी निर्गुण-सन्तुष और शब्द-भाषणपी भक्ति-रसकी पञ्चाब्धी कवितामें व्यक्त किया। इन कवियोंमें राम-कृष्ण-कीर्त्ता बेदास्त जीवकी अस्मिता और भक्ति द्वारा जीवकी सार्वक ब्रह्मानकी भावनाको सहृदयके साथ व्यक्त किया है। इनकी नैतिमय कविता भीड़ी शब्दावली ठंड केन्द्रीय भाषा लिए हुए है। इस कवितापर कुछ नामक मीराबाई और साहू हुसैनके प्रभावकी छाप स्पष्ट दिखाई पड़ती है।

मल्लि मार्गके प्रसिद्ध भक्त-कवि काहुला गुब अर्बुनदके समकालीन ब। इन्होंने सित और सूफी कवियोंकी भावनाओं सङ्गित तथा शब्दावलीको अद्वैत बेदास्तके प्रचारके लिए अपनी कवितामें बाँटा।

इनके जमाना साहूबाईके समकालीन बडीराम और बाबा सुन्दर भी इस धाराके अच्छे कवि ब। बाबा सुन्दरकी यह रामकली बृह-ग्रन्थ साहूबाई सङ्गृहीत है। इस धाराके कवियोंकी कुछ व्यंग्यात्मक रचनाएँ भी मिलती हैं। यह कविता मस्ती और फनकृपणकी कविता है जिसे कानों साधु-भाग समझकर कष्टरूप कर लिया था।

कवि सुभर साहू सिक्कीके स ठवें गुब हरियोबिन्दके समकालीन तथा सेवक ब। सुभर साहूका सम्प्रदाय भी अब तक चला आ रहा है। इनकी कविताका जड़स्थ नैतिक तथा आदिक सिला देना था।

बन्धन दूसरे व्यंग्यात्मक कवि ब। य सुभर साहूके समकालीन ब। इनकी कविताका विषय संसारकी लक्ष्मणता वैराग्य ५५-५५ भाषि है। इनके व्यंग्यसे भरे वर्णन पढ़कर मन प्रयत्न हो उठता है।

रोमाण्टिक कविता

इस समय पञ्जाब ने मनुष्यके सांसारिक प्रयत्नों लेकर कविताकी रचना प्रारम्भ हुई। इसकी प्रेरणा पञ्जाबकी वे प्रथम-भाषाएँ थीं जो पञ्जाबकी प्रेम-मस्ती अरमापर छाई हुई थी। सर्वप्रथम इस कविताका रङ्ग बरेलू तथा पवारबाई था पर धीरे-धीरे इन र रफरकी उपमाओं और शब्दोंका रङ्ग बढ़ता गया। रोमाण्टिक साहित्य आदिक साहित्यके साथ सबसे अधिक रचा गया। पञ्जाबके प्राकृतिक तथा रङ्गीत वातावरण ने प्रेरणा दी। प्रकृति और मानव प्रयत्नों भाषाओंके सम्बन्धसे यह साहित्य और अधिक बनक उठा।

हीर रासा चर्मी, पुरी और भिरभा साहूवा जी महान प्रेम गाथाओंकी लेकर हैं इस समयक रोमाण्टिक साहित्यकी रचना हुई।

हीर रासा की प्रथम-भाषाकी कविताके मूलम बोधन बाबा सबसे पहला कवि रामोवर बा। हीर रासा की कहानी संदर्भमें इस प्रकार है —

रांसा वस्तु हवाएँ के साते-नीते परिवारमें सबसे छोटा बच्चा था। वह बड़ा काढ़-प्यारसे पका था। जब पिताकी मृत्यु हो गई तो भाइयों और मामियोंने उसके साथ कुर्बानगार करना शुरू कर दिया। वह कठकर बरसे निकल गया। अगलातमाके एक सरदार चुनकड़ी बटी हीरसे उसकी बिनाब दणियाकी पार करते समय भाट कीय डङ्गमें मुलाकात हुई। हीरका अनुपम सोन्यर देखते ही रांसा उसपर आसक्त हो गया। रांसा भी कोई कम सुन्दर नहीं था। हीर भी उसे देखते ही निहाल हो गई। हीरने पिता चुनकड़ी अपन हीर बरानके किए एक चरकाइकी ५ करत की। पितासे कहकर हीरने रांसाकी अपन घर घर नौकर रखवा दिया।

हीरे-हीरे दोनोंका प्रेम बढ़ा। हीर वङ्गजन के बाकर रांसासे मिली। हीरके बाबा कैने दोनोका पीठा किया। उनके प्यारका रङ्गव सारे गाँवके बाप प्रकट कर दिया। परिवार स्वयं हीरकी डङ्गपुरके बड़ सरदार विवाह कर ले गए। रांसा पीठीका नेप बनाकर रङ्गपुर गया। हीरकी नगर सहितीकी बहायतासे दोनो प्रवी भाव गए। पीठा करनेपर पकड़े गए और कारी के सामन पेश किए गए। कारीने रांसा बलीके कुछ बम्बलारोसे पचवीठ हुँकर हीर उसे ही खीप दी।

रामोवर जकबरका समकालीन और लम्बाके इलाकेका रहने वाला था। इसकी मायामें स्वलीय रङ्ग बूब उमरा है। वह गाँवका साधारण दुकानदार या पठवाटी था। उसके इस काममें हीर रांसा चुनक लंबा लंबी सूरत बादिता चरित-विशेष बड़ा सुन्दर हुआ है। समूचे काममें भाटकीय रङ्ग है। मिल बिचार पापका प्रभाव भी बाभावरने प्रह्व किया है और उसके काममें उस समयकी संस्कृतिवा सजीव-विश्व मिलता है। हिन्दू-मुसलमानोके सामाजिक रीति-रिवाजोंमें बड़ी समानता दिखाई पड़ती है। हीरके विवाहके समय एक बाहुय भी रत्न बना करता है और कारी निगाह भी पड़वाता है। समाई करनेके किए बाहुय तथा मुनकमान दोनों मिलकर जाते हैं।

रामोवरके समकालीन कवि पीलूने मिर्जा साहब की प्रथम-गाथाका बलिताका रूप दिया है। बर्नन साधारण है किन्तु कथाकी लक्ष्यता साहित्यिक मत-बाटे स्वर, बाबनामोकी बाड़ पीलूके हम कामको जेबा उठावमें सहायता देती है। पीलूके कामका सामाजिक कथितामें एक विषय स्थान है।

मिर्जा-साहब की कथा इस प्रकार है—“मिर्जा राई नदीक किनारे बाबाबाहय रहने का था। माहका अगलातमाके रब-बेलाकी (मिर्जाके मामाकी) बटी थी। मिर्जाके बापकी मृत्यु हो जानेपर माँ उसे अपन मायके ले गई। मन्थिवमें पड़नेके लिए वह जान लगा। माहबी भी बटी पड़ती थी। दोनोंमें प्रेमका अङ्कुर लगा। पता चलेपर मिर्जाकी मायाके घरमें निकलना पड़ा और उधर माहबाके पिताइकी ठेपारी कर की गई। माहबाज विवाहसे कुछ दिन पूर्व कामू बाहयने हम मिर्जाकी लक्ष्य मखा कि मुझे जगावर ले जा। मिर्जा विवाह जाने

दिन अपनी मोड़ीपर सवार होकर आया और साहूबांको भगा ले गया। पर आम भावीको कुछ और ही भंगुर था। साहूबांके भाइयोंन पीछा किया। मिर्जा एक पेड़के नीचे आराम कर रहा था। सन्को घिरपर आया देखकर साहूबां बबरा गई। उसन सोचा कि मिर्जा मैंके मुक्ततेही उससे भाइयांके साथ भिड़ बायगा और उन्हें मार डालेगा। साहूबांने अपने भाइयोंकी भाग बचानके लिए मिर्जाके तीरोंका ठरकता पेड़ पर टोंग दिया। इस तरह मिर्जा निहत्था भाग गया। किम्बदन्ती है कि अपने प्रेमिका मृत्युके पश्चात् साहूबांने भी आत्म-हत्या कर ली।

पीछून मिर्जा साहूबां में प्रेम कुछ अजीब ढङ्गसे पैदा किया है। इसकी कथा अस्वाभाविक लगती है। एक प्रदिका अपने प्रेमकी स्वयं हैं। मीनके मुँहमें प्रकेत होती है। प्रमीसे भाई उसे प्रिय है और फिर मिर्जाकी मृत्युके पश्चात् एक दार्शनिककी भाँति कहती है — “मिर्जे बड़-बड़ पीर-वीरम्बर पर गए, तु किसका बाया है।” कबाकी अस्वाभाविकतासे स्पष्ट है कि कबिके मानव-चरित्रका अस्य ज्ञान है। वह मनुष्यको भावीके सिमीनके रूपमें देख करता है।

दामोदर और पीछूके अलावा इस बीरके दो और रीमाण्टिक कवि हुए हैं—शाकिर बरकुरार और अहमद। दोनों कवियोंन पञ्च बकी बहु प्रचलित प्रथम-भाषाकी छन्दोंमें बोलते हैं। बरकुरारन सस्ती पुर्ण मिर्जा साहूबां और मुक्त जुमेला के किस्से मिल और अहमदन ‘होर उमाई’ कहानीकी रीत छन्दमें वर्णनारमक सीलीमें लिखकर एक नया प्रयोग किया है। अहमदके सबभग सबा सी छान बाद बारिष साहूबां इती रीत छन्दमें अपने महान काव्य “हूर” की रचना करके अमर कीर्ति अजित की।

उत्तरार्द्ध मुगल-काल—पद्य (ई सन् १७००-१८०० तक)

बीरकूबकी मृत्युके पश्चात् मुगल साम्राज्य बार्ड कमजोर पड़ गया। मराठों और सिल्लेन अपनी सक्ति बढ़ा ली। अहमदशाह अब्दालीके आक्रमणके अनुभवोंन भारे देशमें सख्कता मचा दिया था। जो शान्तिपूर्ण शाठावरण पहले पीछ सिल्लेन गुल्मीके साहित्य-निर्माणके लिए किया था वह लस्य हो चुका था। इनलिय सिल साहित्यका विकास रुक गया। राजनीतिक संघर्षन सिल सम्प्रदायका ध्यान साहित्य-निर्माणकी ओर नहीं आन दिया। पर मुर्दा बकि साहित्यके निर्माणमें जुट ही रहे। इन मनसका अधिकतर साहित्य रीमाणिक साहित्य है।

एक कालक प्रसिद्ध मुर्दा कवि मुस्तेयाह (ई सन् १९८०-१७५०) अर्वाहुर (ई सन् १९९०-१७८५) और बर्जेर हुए हैं। मुस्तेयाह साहू हुमीनकी भाँति मीठबाई मुर्दा ब। इन्हीं परमात्मा जीके तथा आम्माई एकताके गीत गाए हैं। मुस्तेयाहने आरणा का कि परमात्माकी प्राप्तिका एकमात्र मार्ग प्रद है। मनुष्य परमात्मासे प्रथमिल म हा। उसे अपना प्रियतम समझकर बुराईन हो आए।

तप करे, ज्ञानकी प्राप्ति करे और मर्त्य में भूमता रहे। इत्येक। ऐसा स्वच्छ बना के कि उसमें बड़ा कृष्टिपात्र होल तब जगत् सत्य ही बह-अन हो। भाए।

जली हैबर और बर्ज-वर्मे सुधी मठके आधारभूत सिद्धान्तोंकी समानताके अतिरिक्त विमता यह है कि जली हैबर गम्भीर कवि है और बर्ज-वर्मे हल्के व्योम-रमक ढङ्गसे अपनी बात कहते हैं। इन सुधी कवियोंके परचाए रोमांटिक कविताका बूझण बोर प्रारम्भ हुआ। मुकबलन हैर-उसा का किस्ता बैठ छम्मे भिन्ना। वह जगत् था। मुकबलनके दर्शनमें कारब आकर्मज तथा नाटकीयता है। उसने कहानों पर बोर दिया है करिज-विजय-र नहीं। कविन पञ्चाशी मुहाबरो तथा बक-कुरावोंकी बड़ी कारीगरीसे कवितामें ढङ्गा है। हैर-उसा का किस्ता भिन्नसे पूर्व मुकबलन हृद्यत मुहम्मदके नाटियों इसन हुसैनके कर्मकाके पैदानम हुए बलिदान सम्बन्धी एक "जन नामा" भी लिखा था।

इस रोमांटिक औरके बूझरे कवि बारससाह (ई. सन् १७१०-१७९) न पञ्चाशी कविताको एक नई विधा प्रदान की। बारससाह कम भक्तिवाला घरबाल छकुर (परिचर्मा पञ्चाश) में हुआ था। इन्होंने बड़ी बहुत भिन्ना मस्बिदमें हासिल की। कुछ असेतक बार-ककुर बराए। जगत्-में बारससाहके साथ छकुर 'कमुर' या नए और छम्मे बलम मई छम्मे-बल मल्लूमके मुपेय बन गए। वहाँ आपन कुरान मरीफत लाहाक हासिल की।

किम्बदन्ती है कि मुस्लिमों बारससाहका लहपाटी वे। कमुरसे बारससाह 'पाक-पटन' करे गए। कुछ मि यहाँ रहकर वे बहुत बहिष् आकर रहने लगे। अब तक बारससाह काफ़ी अनुभव ही चुके थे। यहाँ उन्हें एक नया अनुभव हुआ। बारससाह एक हिन्दू स्त्री जागमरीसे प्रेम करने लग ब हिन्दू उन्हें निराशा की मूँह देखता पड़ा। जागमरीके भाइयों बारससाहको बुरी तरह पीटकर बहाते बना दिया। वे फिर माज्जोमरी बिलेके मज्जा हांस स्वानपर आकर रहने लगे। वहाँ बारससाह नन असकल प्रमकी बार निराशमें बूझकर और महाकामकी रचना की।

इनके पूर्व हैर-उसा 'की' प्रणय-भाषाकी पञ्चाशीमें तीन बार भिन्ना था चुका था। बारससाहकी जगत्-मल्लु ही वहाँ पुरानी ब मपर इन्होंने उसमें प्राथ पूर्वकर उसे नया ढङ्ग दे दिया। नाटकीयता बलाभा भिन्नार और करिज विजयकी कवियोंके इस महावाक्यको पूर्व-रचित वाक्योंसे भट्ट बना दिया। यह एटागा बुलाता महावाक्य था जिसमें बारससाह न अपनी चार, बीड़ा उड़ल की। मनुष्यके मनकी चारों-बायीं विषय बरममें वे ब-आइ थे। प्रम-वीड़ा कविके रोम राममें ब-ब-ब करी थी।

बारससाह पूर्व बहियाका बया-बर्धन कुछ जगत्-भाषित बहूना है। उन्होंने रासाकी ही मीर-वीकी प्रतिभाके रूपमें उपनिबन्ध दिया है मगर ई-रका

ब्रह्माण्ड महादुर तथा पीतयकी सञ्ज्ञाउ मूर्तिके करमें विभिन किया है। बारससाहसरे कबल-मूषमें एसी कोई मस्त्रामाविश्रता नहीं है।

बारससाहस अपने इस महाकाव्यमें पञ्चावकी सांस्कृतिका जीता-जागता विन मौका है। रीति-रिवाज प्रकृतिकी कटा और कुले स्वभाववाले पञ्चाविकोंका विनय करनेमें इन्हें अमृतपूर्व सफलता मिली है। बारससाहसकी सं-रुप्रियता देनवाली रीति है उनकी हृदय मर्मज्ञता। य स्वयं ही अपने पात्रोंके कर्णमें उर्पस्थित है। इनका रहस्य यह है कि इन्हें जीवनका सारा अनुभव था। इन्होंने बहुत दुनियाँ बनी थी। हरिक बाटका जानी थी रखा था। मनुष्यके मनर्क बाह्य लोभाकी इनमें अपार क्षमता थी। बापाके य उस्ताद य।

बारससाहसकी कविताई बूझी विचपता बापाका प्रकाह है। वे बाटकी ऐसे कह भाते हैं कि बीजे य कविता बना गयी यह हों बरन् स्वयं उसके संतरते काव्य-वीथ फूट पड़ा है। इनकी इस धूर्तके पीछ बापापर पूर्व कविकार और विचारोंके मुक्तगी हुई तस्वीर है। इनकी कविताका स्रोत पहाड़के झरनकी सीति बहुत बका जाता है।

तीसरी कृषी बारससाह साय पञ्चावकी संस्कृतिका हिन्दुस्तन कण्ठा है। पात्रोंके जीते-जागते विन मौकोंके सम्मूल नाथ उठते हैं। महर्षिमें पाई-पौआइयोंके रिस्ते औरके, कलाम पात्रोंका रङ्ग पन्थियोंके दुस्य पात्रियोंकी प्रतियाँ मुदलियोंके विञ्जन (सब सत्तियोंका निष्कर चला काटना) धार्मिकोंके लड़ाई-सयह ईर्ष्या द्वय आदिका सर्व-य विनय बारससाहसके काव्यमें निष्ठा है।

चौथी कृषी अकड़ारोंका प्रयोग है। अकड़ारोंसे बारससाहसकी कविता बोलित नहीं है। वे अकड़ारोंका स्वाभाविक ढङ्गसे प्रयोग करते हैं।

बारससाहसके काव्यका एक पङ्क्तु और भी है कि उन्होंने उस समयके समाजकी बुराईयोंका वर्णन ही नहीं किया बल्कि उसमें सुधार करनेके कई मुसाव भी दिए हैं। समाजका आत्मसक अङ्ग रही है। बारससाहस हीरकी मूत-मूत अनुप्राई और बीरतायी देवी बना दिया है। उन्होंने सामाजिक प्राणियोंकी एक मुम्बा कठापा है कि दिलका मद किमोके जाय नहीं लौकना चाहिए।

बारससाहसके महाकाव्य 'हीर' की कहानी वास्तवमें सारे पञ्चावक रीति रिवाज और सामर्थ कृषिकोंके विच्छ लोहा मेनवाले वा प्रभियोंकी महान पाषा है।

बारससाहस पञ्चावके अमर कवि है। आज भी परिधर्म और पूर्वी पञ्चावके मोह-मीनमें बारससाहस-रचित हीर काव्योंके अवागपर है।

हीर की कथाकी कवितामें अमृतवाले इतने मय्य एक हीर कवि हमस भी हुए हैं। इनकी रचनामें मौलिकता कम है और जगता है कि हीर-पीता की पुष्टि-की-मूर्त कहानी किसी पूर्वी कविते से ली गई है।

मूर्त तथा रोमाण्टिक कविताके इन कथावले साव-माव उन ब्रह्मणकी उषस-मुपसस बरतनकी कविताकी फिरसे जग दिया, पर इस हीरकी सत्रिक कविता

नहीं मिलती। गजाबल द्वारा रचित 'नाबरसाह बी बार' बहुत प्रसिद्ध है। गजाबल मटीला हरमा बिना साहपुर (पश्चिमी पञ्जाब) के निवासी थे। गज बलकी 'नाबर साह बी बार'को (अनक ऑफ बी पञ्जाब हिस्टोरिकल सोसाइटी भाग १) में रामन अलरोमे 'राय बहादुर हरिकृष्ण कौल' माइसे मुद्रण कर छपाई की।

यह बार नाबर साहके आक्रमणके लीई आधी सदी परचात् बिबी गई थी। इसमें भारत-योके देश-भूमकी उमाय गया है और नाबरसाह तथा ईरानी सम्प्रदायकी मित्रता की गई है। यह बार' ऐतिहासिक दृष्टिसे काफी महत्व रखती है। इसमें नाबर साहके आक्रमणकी कई बारोंकी साथ विभिन्न किता पया है।

उत्तरार्ध मुगल-काल—मध्य

इस समय पञ्जाब वसका था विकास हुआ उसका विषय नहीं पुराना रहा। साहिबी (कचारे) समीपदेशकी रीति-रिवाज गद्य लैरमें लिनी जाती रही। गद्यके विकासमें सबसे अधिक काम पाई मनीसिंह किया। वे स्वर्ण मन्दिर जमुसरके समीप (पुराहिठ) थे और गुरु भागिबसिंहके इबुरी सिख यह चुक थे। सिख धर्म और पञ्जाबी भाषाके अतिरिक्त इन्हें अन्य सभी तथा विशेषकर संस्कृत प्यारती और राजभाषा पर बहुत अधिकार था। इसीलिए इनकी गद्य-लेखनीय विद्वानोंकी-सी प्रसिद्धा है। इनका प्रसिद्ध ग्रन्थ लिनी बी भक्त माल है जो उस समयके गद्य-साहित्यका उत्कृष्ट नमूना है। इसमें प्रसिद्ध लिनीकी रीति-रिवाज समुचित है। हरेक रीति-रिवाज साथ गुरु-ग्रन्थ साहबके लिनी रीति-रिवाजकी व्याख्या की गई है। पञ्जाबी भाषा और साहित्यके आलोचकोंका मत है कि भाई मनीसिंह पञ्जाबी गद्यके जन्यदाता है। भाई मनीसिंहकी भाति पञ्जाबी गद्यकी समुद्रिणी बलानबालीमें एक बहुत साहस है। इनका प्रसिद्ध ग्रन्थ पारसमान है जिसमें साहु-महारमाओंकी साजिया सीबी सरल भाषामें लिनी हुई मिलती है।

इस समयक मुगलाम गद्य-लेखकों द्वारा लिनी गई हजारत मुहम्मद साहब बर्बर और रचिदासकी रीति-रिवाजों में मिलती है। पर इनकी भाषा इतनी लिनी है कि केन्द्रीय पञ्जाबके लोगोंसे बहुत दूर नहीं गई है।

सिख राज्य-काल (सम् १८००—१८६० तक)

महाराजा रणजीत सिंहका राज्य मारे पञ्जाबियोंका एक मात्र राज्य था। बाठ-बस ली गद्य तक भारत बिदेसी अलिङ्गनके नीचे पड़ा करारना रहा। अब उसने एक समीपकी नीम ली थी। प्रवेशमें सान्ति स्थापित हो गई। लीहार एक बार फिर राजधानी बना। और लीहारकी भाषा सब जनह प्रचलित होने लगी। यही भाषा उस समय के साहित्य की भाषा बहामाई। महाराज रणजीत सिंह बने ही कम पढ़े-लिखे थे किन्तु उनमें राजनीतिक अनुपद तथा मूल

बूझके साथ कलाकारोंके परस्मन-निरासनके अद्भुत समर्थता थी। सेबकों-कबियोंका भी बहुत सम्मान करते थे। उन्हें पारियों और पुरस्कार देते थे। यद्यपि महाराजा रणबीरसिंहके दरबारके बाका फारसी र्थ फिर र्थ उनके पञ्चमी भाषाके प्रति प्रमत्त प्रवेशके हरेक भागमें कवि और छेत्तक पैदा किए। पञ्चबीरकी एक ठास रूप मिलना शुरू हुआ। इस समय अधिकतर रोमांटिक कविता रची गई।

महाराज रणबीरसिंहके दरबारमें बिदेसी कला भी थी। महाराजा अपने अमानके किरा, ची गई चीथके प्रदूष करना जानते थे। अपनी सेनाको आधुनिक साधनोंसे सज्जित कराने के लिए उन्होंने फ्रीसीसी अक्सर नीकर रक्त थे।

सिख राज्य-कालके सबसे अधिक प्रसिद्ध तथा प्रतिनिधि कवि हासम थे। हासम ११६१ हिस्रीमें पैदा हुए थे और १२३० में उनकी मृत्यु हुई। एक किम्बदन्ती है कि महाराज रणबीरसिंहके पिता सरदार महासिंहकी स्तुतिमें सिखी एक कविता सुनानेपर रणबीरसिंह उनपर बहुत क्रोध हुए। धीरे-धीरे राज दरबारमें लड़ा बढ़ता गया और हासम महाराज रणबीरसिंहके विरुद्ध राज्य-कबियोंमें हो गए। उन्हें आरीर ई. गई। हासमकी सन्तानें १६४७ तक सिख राज्यके अन्तर्गत मिला। धार्मिक रूप ई गुजर कर रहीं हैं।

हासम भगवे कला (जिम्हा अमृतसर) के निवासी थे। हासमने सीरी-मरहाद जैसा मकनू साहनी-महाराज सस्ती-पुर्न बाह्य तथा बाह्य माह वादि प्रयोगोंको रचना के। इनके अन्तिम तीन रचनाओंमें भावुकता सरल वर्णन विस्तारसे सकोष भाषाकी सावर्ग आदि गुण पाए जाते हैं।

सस्ती-पुर्न की कहानी इस प्रकार है —

सस्ती नाम बाबसाहके महामोमें पैदा होती है। उसके जन्मके समय ही क्पाठिपी बता देते हैं कि यह लड़की जबानीमें प्रेमके पीछे मर जाएगी। नाम अपनी बहमायी और साजका क्यात करते हुए सस्तीको सन्तुष्टमें बन्द करके गरीमें प्रवाहित कर देते हैं। वह सन्तुष्ट पुष्पा बस्तीके हाथ पड़ जाता है, वह सस्तीका पालन करता है। उसके अवन हा जालपर पुष्पा उसके बिनाहकी बात पकड़ी करना चाहता है पर सस्ती मानती नहीं। आबी नाम बाबसाहके पास आकर शिकमत करता है। सस्तीको नामके दरबारमें पेश किया जाता है। बस्तीका ठाबीज दिलाकर सस्ती बाबसाहको संकेत करती है कि वह उसकी ही बटी है। उन दिनों किसी मूर्तिकारण एक सीधामरके नाममें बस्तीका छहपारे पुर्नका बुत बनाकर लड़ा किया था। उसे देखते ही सस्ती मुग्ध हो जाती है। एक बार बस्तीको कोई कविता उधर आता है। सस्ती उन्हें रीर करना देती है। एक ही धर्मपर लड़कने के लिए सीधार होती है कि वे उसे पुर्नसे मिला दें। अन्तमें पुर्न आता है। पुर्न जब सस्तीके सीधामरको देखता है तो उसपर वह भी मुग्ध हो जाता है। दोनों प्रेमी एक साथ रहने लगते हैं। पर अब बस्तीको

शायरी महापद्य रणबीरसिंह भी इसी समय लिखी गईं थितकी भाषा आजकी पञ्जाबी भाषाके बहुत निकट है। अंग्रेजोंके पञ्जाबमें पैर जमानके पश्चात् ई. सन् १८५४ में मुघियाणा-मिशनन पञ्जाबी काव्य भी तैयार किया। इसी समय मकबर-नामा और अलखे-अकबरी के भी पञ्जाबी अनुबाध प्रकाशित हुए।

अंग्रेजों राज्य-काल (सन् १८६०-१९२० तक)

पञ्जाब भारतका सबसे अधिक शक्तिशाली राज्य था। सारे भारतपर अपने पैर जमा लेनेके बाद अंग्रेजोंने इसपर अधिकार किया। विदेशी वर्चस्वतान पञ्जाबका यही नीचमें मुखा दिया। चारों तरफ निरुधारे कारण बीबनमें बार उदासीकता छा गई।

ई सन् १८७२ में नामधारी आन्दोलन आया। इसका उद्देश्य सिक्कोंकी सार्ई हुई मान-मर्यादा छोड़ो तथा देशकी स्वतन्त्रताके लिए एक तहफ पैदा करना था। नामधारियोंने विदेशी सरकार, विदेशी शिक्षा विदेशी बस्त्र तथा प्रत्येक विदेशी वस्तुओंके बहिष्कारका प्रचार किया। नामधारी सिक्कोंके मत्ता नुस्छ पान-सिंहको अंग्रेजों द्वारा बर्मामें निर्वासित किए जानसे और उनकी समन नीतिके कारण यह आन्दोलन कुछ कम-सा गया पर भीतर-ही भीतर चिनपाटी सुलगनी रही। उस समयके साहित्यपर इसका कोई बिसय ब्रभाव नहीं पड़ा।

अंग्रेज सरकार पञ्जाबमें आठे समय अपने छाव यू पी से ऐसे कस्बोंकी एक सेना भी भेरी आई थी जिनकी मातृभाषा उर्दू थी। इन उर्दू बाननवाले कस्बोंकी महापदासे उर्दूका अबास्तकी भाषा बना दिया गया। आज चलकर पञ्जाबमें मिताका माध्यम उर्दूको बना दिया गया ताकि कस्बोंकी भाषा यहीसे पुरे होनी रहे। बनानी बाबू भी सरकारी इन्पुत्रक लिए भेजाए गए। बनानी भाई अंग्रेजी भाषाके जानकार थे। इसलिये अंग्रेजोंका काम उनके तिनुई किया गया। ये बनानी बाबू पञ्जाबीको सरकारी भाषा बनानका विरोध भी करते रहे।

मौलाने क्रिस्ता-कर्मियों पञ्जाबीका प्रचार जारी रखा। इनके पास न तो अंग्रेजी शिक्षा थी और न अधिक ज्ञान। किन्तु इसी समय मिताके लक्षमें पञ्जाबी भाषाके प्रबध एवं सिंह-सभाके आन्दोलन पञ्जाबी साहित्यमें एक नया मोड़ लाया।

ई सन् १८९० में मिता विमानका वायविय लाहौरमें स्थापित किया गया। मिताकी भाषा उर्दू थी। उपर लहानियोंका पञ्जाबीमें शिक्षा देनेकी छुट दी गई थी। इनकी भाषाकी पूरा करनेके लिए लाला बिहारीलाल पुरी आदिन मिता सम्बन्धी पुस्तके लिखी और इन प्रकार नए पञ्जाबी गद्यकी नींव पड़ी। ई सन् १८९४ में लाहौरमें औरिएण्टल कालज नीता गया। इसके शिष्यलाल डॉ. मैटीनर इसी भाषाओंके प्रचारके जबरदस्त हिमायती थे। इस कालेजका उद्देश्य देशी भाषाओंका प्रचार करना था। इस कालेजमें पञ्जाबीका प्रमुपजा

बी गई और पञ्जाबीके प्रथम प्राध्यापक भाई गुरुमुखसिंह नियुक्त किए गए। ईसाई पारिवर्तने पञ्जाबमें अपने प्रचारके लिए सुविधानाकी अपना केन्द्र बनाया। इन्होंने सुविधानाकी उप-भाषाकी प्रचलित करनेका प्रयास किया। ई सन १८४९ में इन्होंने ही सर्वप्रथम गुरुमुखी टाईपका भी प्रचलन किया था। ई सन १८८२ में पञ्जाब यूनिवर्सिटीकी स्थापना हुई। इसके अंदर, साहित्यकी जानकारी बढ़ने लगी। साथ ही पञ्जाबीके पठन-पाठनसे एक नया पाठक-वर्ग भी तैयार हो गया। जोरिएष्टस-कांसज-कौन्सिलको पञ्जाबी उर्दू हिन्दीकी मध्य पुस्तकोंपर पुरस्कार देनेका अधिकार दिया गया। पञ्जाब टक्स्ट बुक कमेटी न पञ्जाबीमें बिदेसी पुस्तकोंके अनुबाद प्रारम्भ किए तथा मौखिक रचना को पुरस्कृत किया।

ए पञ्जाबी साहित्यपर अपना प्रभाव जालमबाका दूसरा बान्धोसन सिंह-सभाका था। भाई गुरुमुखसिंह, बहादुरसिंह आदिन लाहौरमें बालसा धीवान की नींव रखी। सिंह-सभाओंको संगठित करनेवाली यही एक संस्था थी। पञ्जाबके सभी मुख्य शहरोंमें सिंह-सभाकी शाखाएँ स्थापित की गईं। सिंह-सभाओंका मुख्य उद्देश्य पञ्जाबीका प्रचार करना था। इसीके प्रयत्नसे पञ्जाबीका सबसे पहला पत्र गुरुमुखी लाहौरसे १८८ में प्रकाशित हुआ। उसीसन्नी सदीके अन्तमें दूसरे पत्र जालसा ने काफी प्रसिद्धि हासिल की। ई सन १८९९ में जालसा समाचार का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ। इसके कर्तव्य भाई बीरसिंह व बा प्रभातकालीन सूर्यकी भांति पञ्जाबी-साहित्य-संविधानपर उभर गए।

सिंह सभाक दूसरे सेलकोंमें काहनासिंह, गुरणसिंह और चरणसिंह छोड़ अधिक मशहूर हैं। गुरणसिंहन लिखनेकी एक गई सीसी बलाई। इन्होंने निबन्ध एवं कविताएँ लिखी हैं। उनके कुछ खुसे पैदान और खुसे सेव इनकी पुस्तकें प्रसिद्ध पुस्तकें हैं। चरणसिंह साहीबने पहलीबार पञ्जाबीके हास्यपूर्ण निबन्ध एवं कविताएँ लिखीं। य भीनी साहित्यिक पत्रिकाके सम्पादक भी थे।

यहीपर पञ्जाबीके महान् कवि लनीराम बाबिकको भी नहीं भूझाया जा सकता। केवल भाई बीरसिंह को ही इनसे ऊँचा पर दिया जाता है। कैसर नयारी नवी जहान और जम्न बाड़ी इनके प्रसिद्ध काव्य संग्रह हैं।

सन १९१९ से लेकर कुछ वर्षक सिक्काभी अंग्रेजी सरकारसे टकर चलती रही। इस बान्धोसनकी चलानवाले जकाती थे। उस समय जनतामें एक उत्साहवा प्रचार हुआ। उसका प्रभाव साहित्य रचनापर भी पड़ा। गुरुमुखसिंह और हीरसिंह बई भी प्रसिद्ध लेखक हैं। मास्टर ठारसिंह भी उपन्यास लिखते रहे हैं।

सम्भवतः १९२० के आस-पास कृपासागरने सर वास्टर स्काटकी कम्पनी कबिता भी मेडी आफ दी सेक का पञ्चाबीमें अनुबाद किया। कृपासागरके अनुबादोंकी माया ठठ पञ्चाबी है।

साहित्यिक दृष्टिसे इस समयके साहित्यका कोई विशेष महत्व नहीं है। हाँ इसमें कोई शन्देह नहीं कि लेखकोंन जून भी भरकर छिन्ना और उनके हृदयमें अपने साहित्यकी बढ़ानेकी उत्कट प्यास थी।

×

×

×

[नोट—सन १९२ से आज तकके पञ्चाबी साहित्यका संक्षिप्त परिचय 'कवि-की भाला पञ्चाबी—अमृता प्रीतम से दिया गया है।]

● ● ●

भाई वीरसिंह

[कवि-परिचय]

भाई वीरसिंह

• • •

भाई वीरसिंहका जन्म पौष दिसम्बर १८७२ ई में हुआ था। आपके पिता डा चरनसिंह ब्रजभापाके कवि व बीर नाता पण्डित हुजारासिंह संस्कृत तथा फारसीके विद्वान् व। उनकी धार्मिक प्रवृत्तियों की टीकाएँ बहुत प्रसिद्ध ह। बचपनसे आपन पिता और नातासे साहित्यिक तथा धार्मिक प्रभाव ग्रहण किया। भाई वीरसिंहन जमुनसरके मिशनरी स्कूलमें दसवीं वर्ष तक शिक्षा हासिल की। बोड़ी बहुत संस्कृत और फारसी उन्होंने अपने नाता भानी हुजारासिंहसे पढ़ी।

भाई वीरसिंहके दादा बाबा कान्हूसिंह सिन्ध इतिहासके प्रसिद्ध अन्वेषक बीबान कीड़ामरुकी सम्मान व जी मीन मशूके समय मुल्तानके गवर्नर व बीर मुल्तान जैसे उनके उपरमर्त्यमें उन्हें महाराजा बहादुर का पित्तार मिला था। सिन्ध आपके प्रति श्रद्धा और मुर्शिबनोके समय सिन्धोंकी हुर प्रकारसे सहायता करनेसे कारण सिन्ध इतिहासमें इस महापुरुषका बीबान मिट्टा मरु के नामसे प्रम और सम्मान दिया जाता रहा है।

बचपनमें ही भाई साहब स्वभावता-प्रिय व। उनकी बचि मौकरीकी और न हाथर व्यापारकी आग थी। ई सन् १८९२ में इन्होंने जिनके साथ दिसम्बर बरीर हिन्द प्रम लाला या पञ्जाबीका जमुनमर्गमें सबसे पुराना प्रस है।

माई साहबका विवाह ई. सन् १८८९ के लगभग हुआ था। इनके दो सड़कियाँ थी। माई बीरसिंह ई. सन् १८९८ से लेकर अपनी मृत्यु पर्यन्त साहित्य-साधनाम लग रहे। आप सर्वतोमुखी प्रतिभाके धनी थे। काव्य महाकाव्य गद्य लेख उपन्यास नाटक धार्मिक व्याख्या आदि सब विधाओंमें इन्होंने सफलता प्राप्त की। राजा मूरतसिंह (महाकाव्य) और बाबा भीमसिंह (उपन्यास) इनकी दो अमर कृतियाँ हैं।

माई बीरसिंहन पञ्जाबी साहित्यकी लगभग पचास साल तक सेवा की। इतना लम्बा बरसा साबब है। किसी लेखकों का है। ई. सन् १८९८ से पूर्वक छिट-पुट रचनाओंको छोड़कर हम इनकी कृतियोंकी तीन भागोंमें बाँट सकते हैं —

प्रथम दौर (ई. सन् १८९८-१९२) में विद्यपति धार्मिक कवि प्रचलन रहि सित धर्मके प्रचारका लक्ष्य सामन रखकर धार्मिक उपन्यासोंके रचना सबसे प्रथम माई बीरसिंहन प्रारम्भ की। इनका सबसे पहला उपन्यास सुन्दरि ई. सन् १८९८ में लिखा गया। यह उपन्यास पञ्जाबीमें सबसे अधिक पठित पुस्तक मानी जाती है। अब तक इसके लाखोंकी संख्यामें कई संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं।

सुन्दरि की मूल कथाका सम्बन्ध एक ऐतिहासिक घटनासे है। इसमें अठारहवीं शताब्दी के दिव आचरण विद्यपति दिव बीरसिंहजीकी रचना का बड़ा पैदा किया गया है। विद्यपति (ई. सन् १८९९) सतलुज और (ई. सन् १९) की इसी धार्मिक दृष्टिकोणों के लिए लिख गए थे उपन्यास है। कथा-बस्तु और वर्णनकी दृष्टिसे ये रचनाएँ बड़ी आकर्षक हैं। ये धार्मिक रचनाएँ माई बीरसिंहके एकपक्षीय विकासकी ओरक की।

दूसरे दौर (ई. सन् १९०२-१९२) में माई साहबन 'राजा मूरतसिंह' जैसे महाकाव्योंके रचना करके पञ्जाबी साहित्यकी विद्या ही पाई थी। यह महाकाव्यका विषय धर्म तथा दर्शन है। यह महाकाव्य धारणाई उत्तम है। माई बीरसिंहन राजा लक्ष्मण सिंह (ई. सन् १९१०) नामक एक नाटक भी लिखा जिसका ब्यापक पञ्जाबीके प्रारम्भिक नाटकोंमें सुनिश्चित है।

इनके उपरान्त छोट्टी कविताओंका दौर आता है। 'सूरज के द्वार' (ई. सन् १९२१) नाटक दूसरे (ई. सन् १९२५) विजयिणी के द्वार (ई. सन् १९२७) माई बीरसिंहने तीन प्रमुख काव्य-संग्रह हैं। ये कविताएँ भाव-उत्प्रेरण हैं। सूरज के द्वार और विजयिणी के द्वार के छोट्टी कविताओंमें विद्यपति कबीरजी धार्मिक भाषाई अधिष्ठाता हैं और माइहूँ दर्शन जैसे कवि विषयों के बड़े हमक-मुफके हममें व्यापारी हैं। मगर दूसरे ये कवि प्रकृति के ही बरप-रक नमोनाह कोमें एक अतीविक चन्द्रहार सेना के हैं। अत्यन्त अत्यन्तका अनुभव लिया है।

तीसरे दौर के आरम्भिक गद्यों में माई साहब की पञ्जाबी साहित्यकी सेवा का अन्त है। माई बीरसिंहका है। 'बाबा भीमसिंह' (ई. सन् १९२४) 'बलवीर बलवीर'

(ई सन् १९२५) 'गुरु नामक बमलकार' (ई सन् १९२६) 'सतबन्त कीर' (इसराय-ई सन् १९२७) इनके गद्य साहित्यके विकासकी संक्षिप्ति है।

धार्मिक भावोंसे ओढ प्रोढ भाई बीरसिंहके गद्य साहित्यन सिद्धोंमें समाज-सुधारका एक शक्तिशाली आन्दोलन खड़ा कर दिया था। सिद्धोंकी सामाजिक आधुनिक भाई बीरसिंहकी सशक्त सेवनाकी देन है। ब्रजभाषाके महान् शिखर कवि भाई सन्तोंकासिंह रचित गुरु प्रताप मूर्त्य धन्य के सम्पादनमें आपन कई वर्षके परिश्रमसे इस गुरुमूर्त्य लिपिमें पाठ टिप्पणियों सहित ई सन् १९२५ में प्रकाशित किया।

पञ्चाबी पत्रकारिताके क्षेत्रमें भाई बीरसिंहने सालसा समाचार के प्रकाशनके साथ प्रवेश किया था। उन दिनों पञ्चाबीमें पत्रोका प्रकाशन अपनी प्रारम्भिक अवस्थामें था। पञ्चाबी पत्रकारिताके इतिहासमें इस पत्रन एक चेतना मई दियाका जन्म दिया। बाकी छिट-मुट पत्र प्रकाशित होते रहे, पर कोई छह महीन चलता और किसीकी जाम् सार भरकी ही होनी थी। उन दिनों पञ्चाबीके किसी पत्रको जीवनदान देते रहना बड़ भारी साहसका काम समझा जाता था। भाई बीरसिंहने गद्य रचनाएँ पहले इस पत्रन धारावाहिक रूपसे छपती थीं सत्यवात् उन्हें पुस्तकका रूप दे दिया जाता था। यह पत्र भाई बीरसिंहकी साहित्यिक गतिविधियोंके साथ-साथ सिंह-सभा आन्दोलन का भी प्रतिनिधि पत्र माना जाता था। भाई साहबन सिल धर्मके प्रचार हेतु सालसा ट्रेक्ट सेंटरादी कई नीक रत्न भी जिसका मुख्य उद्देश्य शिक्षा-साहित्यका प्रचार करना था।

भाई बीरसिंहकी सेवाओंका वेसते हुए पञ्जाब यूनिवर्सिटीन ई सन् १९४९ में आपको डॉक्टर ऑफ़ लॉ एण्ड एग्रीकल्चरल लॉ में उपाधिसे विभूषित किया था। ई सन् १९५२ में आप पञ्जाब विज्ञान परिषदके माननीय सदस्य मनोनीत किए गए। ई सन् १९५५ में आपकी अन्तिम काव्य-मुक्तक मेर छाईकी खोजी की साहित्य बरगर्दन द्वारा ५०० का गुरुकार प्रकाश किया गया। जीवनके अन्तिम दिनोंमें आप बहुत कम लिखन कर किन्तु सालसा समाचार द्वारा आपके विचार फिर भी पाठकों तक पहुँचने लगे रहते थे। भाई बीरसिंहके जीवन-वर्षनका दृष्टिमें रहने हुए कहा जा सकता है कि आप सिल साहित्यक सबसे बड़ कवि थे। आपन गद्य अधिक सिद्धा। आप सिल विचार-धाराके प्रबल समर्थक रहे किन्तु फिर भी आप दीन भाषा विषय तथा प्रकृति-वर्णनके दृष्टिमें उच्च कविक साहित्यकार थे। आपन गद्य-य शैलीमें सुमान्यता ला लिया। पञ्जाब संस्कृति और जीवनकी जी शक्ति आपकी रचनाओंमें मिलनी है वह वास्तवताही कविताके अतिरिक्त नहीं नहीं मिलता। भाई बीरसिंह सिल विचार-धाराके कवि होते हुए भी पञ्जाबी जीवनपर पूरी तरह छा गए थे।

पाण्डु-शाली

पाई बीरसिंह एक साधारण-सी बातको भी असाधारण बना देनेमें समर्थ है। इनका प्रकृति चित्रण बड़ा ही सजीव है। प्रकृति-वर्णनके अलावा पाईजीने बिछोहकी पीड़ाको बड़े ही हृदयस्पर्शी शब्दोंमें गुंथा है। जहाँ एक ओर इनके वर्णनमें विस्तार है वहीं दूसरी ओर मोड़ शब्दोंमें अपना मान प्रकट करना भी वे जानते हैं। इनकी सीसीमें कहीं-कहीं प्रकारका रङ्ग आ जानेसे काव्य-कलापर कुछ बंटे अवश्य पड़नेवाली हैं।

असङ्कार कविताके बाधूयक है। पाई बीरसिंहने प्रसङ्गानुसृत असङ्कारों का प्रयोग एक सुलभ हुए कविता की भाँति किया है। मुहावरों द्वारा सीसीको रोचक बना जोरदार बनाया है। कविता और सङ्गीतमें बड़ा बतियट सम्बन्ध है। इन्हींमें अपनी कवितामें सङ्गीतकी कम पैदा कराने के लिए अनुप्रासोंका भी प्रयोग किया है। प्रमाणित और ऐतिहासिक सङ्घटकों के साथ गलीन सङ्घट और प्रतीकोंका प्रयोग भी किया है। सिल मुकबोंकी बाबीके सहारे अस्पष्टताके कारण मुब बाबीकी समझकी आपकी कवितामें यत्र-तत्र बिजरी पड़ी है।

कवितामें संकीर्णता

पाई बीरसिंहकी कवितामें सङ्कीर्णताकी प्रधानता है। कोई-कोई कविता तो पाठक स्वयं ही या बँठता है। इसका कारण यह है कि पाई साहबका प्रारम्भिक जीवन बार्मिक रङ्गमें रँवा हुआ और मिल समके अनुकूल रहा हुआ था। मुब-बाबीके सतत सम्पादक के कारण वे सङ्कीर्णता और सम्बन्ध हुए। मिल मुकबोंकी नारी बाबी सङ्कीर्णता एक ऐसा बीज है जो कभी नहीं मूगना। मिल-परम्पराके अनुसार सङ्कीर्णता की बड़ी महिमा है। मुब-गाम मुकडारोम मुब बाबी पाई मर्ल है। मुब-वरका कोई ऐसा नहीं मिलेगा जो सङ्कीर्णता में पारङ्गम न हो। जो मुब बाबीके मुन्दर सम्पादकी लय तात् और स्वयं बोलना न जानता हो।

पाई बीरसिंह इन्हीं सम्पादकों के ऊपर बह हुए थे। इनके रोम रोममें मुब-बाबीका वह सङ्कीर्ण रस गया था जिसे वे बचपनमें ही सुनने में आए थे। जब बचपन में इन्हीं काव्य-शैली के रस गया था वह सङ्कीर्ण-सम्पाद इनकी कवितामें भी इस गया। सङ्कीर्णता के साक्षात्कारकी प्रकृत आत्मा प्रकट हो गई थी। प्रेम-साधना जहाँ कल्पनाका जन्म देती है वहाँ एक मोहित सङ्कीर्णता जन्म-बाबी भी बन जाती है। पाई बीरसिंह के स्वभावकी सीमा-साधना के कारण इनका सङ्कीर्ण भी एक कोनलता सिध हुए है। इनकी कवितामें घरे हुए सङ्कीर्णता के पाठक एक बर्बाद मस्ती में डब जाता है जहाँ-जहाँ भी न हो जाता है।

काव्य-कल्पना

भाई बीरसिंहकी काव्य-कल्पनाका चित्र करते हुए हम यह बात भी देखें कि उनकी कवितामें मनीषिता किस रूप तक है। रूप-विधानकी दृष्टिसे भाई बीरसिंहके काव्यमें एक मनीषिता अल्प दृष्टि रखनवाचको भी दृष्टिगोचर होती है। भाई साहबके महाकाव्य 'राजा मुरतसिंह' के शिरच्छापी छन्दसे उत्पन्न काव्य प्रवाह हमारे इन कवनकी पुष्टि कर देता है। इस छन्दका प्रयाग गुरु बोधिन्य मिहून अपनी एकमात्र पञ्चाशी कविता 'बगड़ी की बार' में सफ़लतापूर्वक किया था। तदुपरान्त 'हीर-राग्य साह' में पञ्चाशीमें 'बीठ' छन्दका प्रचलन हुआ जिसमें अपनी एक अल्प परम्परा कायम कर ली। इनके पञ्चाश पञ्चाशी माहित्म्यमें 'राजा मुरतसिंह' ही एक ऐसा महाकाव्य है जो अपना छाना नहीं रखता। शिरच्छापी छन्दके प्रवाहमय कवनन इसमें बहु मनीषिता काई है जो भाई बीरसिंहकी सारी काव्य-रचनाओंमें नहीं भी दृष्टिगोचर नहीं होती।

कल्पना आत्माका एक स्वाभाविक गुण है। साहित्यमें रूप और विषयके दोनों पक्षोंका यह नहीं बिगाड़ देना है। भाई बीरसिंहकी काव्य-कल्पनाकी परतक छिपे कविके जीवन दर्शनकी समझना आवश्यक है। भाईजीन अपना साध जीवन-दर्शन भारतीय सभ्यतिके धर्मोत्ति कले आ रहे विद्याल आत्म-दर्शनके समक अङ्गोत्ति उधार किया है। इन दृष्टिमें य मनीष नहीं है ये परम्परावादी है।

पञ्चाश महात् रोमाञ्चिक गाथाओंकी जन्म-भूमि है प्रम तथा सोम्यपर्वक रहलन पाया है एन बीन-आपली कविता है। इस अरनीके कथ-कथन प्रम और सोम्यपर्वक अन्तर्गत नाचने-नृत्यानी पौष सदियोंके रूपमें दिग्दर्शी प्रकृति मृताई देनी है। यहाँ प्रमसिंह बास्ट छिटमैनेके मात्र हाथ निकाले है मही बुध मानक और माह मुहम्मद विदेशियों द्वारा अपने देसका पीरों तले रौद्रक हिम जानवर तदुप छटने है। उनकी यह तदुप जह काव्य-कल्पनाका रूप केनी है वो पञ्चबाकोकि हिमोंमें देन प्रेमकी एक अदिरक द्वारा प्रवाहित हो उटनी है।

भाई बीरसिंहने ओ महान् काम किया बहु या पञ्चाशी भाषाको परम्परागत मन्त्र-भाषाके लक्ष बोध निकालकर एक नया रूप प्रदान करना। जिस समय भाई साहबन गार्हस्थिक जन्ममें प्रवेश किया उस समय पञ्चाशीकी भाषा नहीं बरन् वेदोंकी बोधी समझा जाना था। पञ्चाशके अधिकतर विद्वान् कवि जहभाषामें कविता लिखना बहु बीरसिंहके ज्ञान समझने थे। भाई बीरसिंहके जिना हा अरसिंह जहभाषाके अलक्ष कवि थे। किन्तु भाई बीरसिंह पञ्चाशी भाषाको एक पूर्ण भाषा बनानमें ओ माधना की बहु कनी नहीं मुनार पा मर्न।

प्रकृति-वर्णन

पञ्चाशी कविताकी भाई बँरसिहकी प्रकृति वर्णनकी जो हैन है वह अद्वितीय है। इनसे पूर्व किसी कविने इतनी गहराई और एकाग्रतासे प्रकृति के साथ एकात्मकता स्थापित नहीं की थी। भाई साहब प्रकृति के सौन्दर्यको देखकर मस्तीमें मूढ चले हैं। कोमल भावोंको व्यक्त करनेवाली इनकी कलम प्राकृतिक छटाको निहारत ही ठेक यहिसे चमक उगती है। य जब कदमीरके सौन्दर्यका वर्णन करते हैं तो किसी अनूठ प्रभावसे मन मस्तीमें डूब जाता है। कवि बेरी माग* के सौन्दर्यको देखकर पुकार चढ़ा है —

बेरी माग ! तेरा प्युला सलका
जब अँखियाँ बिच बजवा
झुंझत दे कावर बा जलवा
ले सवा हक सिजवा।
रंग किरौजी सलक बस्तीरी,
उलक भीतिपाँ वाली,
बहु बिच भा आ जगज होई
जी बेक बेक नहीं रजवा।
ना कुई नाद मुरोब गुनीवे
किर संपोत रत छापिया
गुन चाग पर बन तिरे बिच
कविता रंग—जमाइया।
तरद तरद कर सुहिमी तैनु
बहु सहर बिच जाये,
महर पोमीर अडोल मुहाये।
ते किहा लोग कजाइया ?

[बेरी माग ! जब तेरी प्रथम सलक भीनोंमें समानी है तो प्रकृति के मृदाका बलवा मेरे समवा मजमनक हो जाता है। तुम्हारा किरौजी रङ्ग बिल्वीरी सलक एवं मुक्ता-नी जमज डमक आरामसे समानी पन* वाली है। तुम बेक-बेककर मन भरना नहीं है। कोई मन और ठाढ़ मुनाई नहीं देना है। किर भी मज्जुल नद बरग ररा है। मौन रूपम कविता तुममें व्याप्त है। मेरे जीवन मर्यादा आनन्द आनन्द-विमोह हो उठती है। तूने गजन घम्वीर एवं जडिय यह कैसा योग धारण किया है ?]

फूसोंसे इन्हें भ्रम है। गुरुदाउरी नगिस और मुलावजा सौन्दर्य इन्हें
प्राकृतिक रङ्गमें रंग देता है। मुलावजे फूसका एक वर्णन कीजिए —

बरती गोद बनाय
मे इत बिब खोजिया
मिट्टी जड़ा पड़ाय
मे पीजन बिबिया।
रज रज पीता नीर
मे जलों बचवियों
हो यिया मे नमपीर
ते बेलां जलिया।
बहल बरातों सब
मे पासी बिबिया
मृता मे रज रज
ते मृदा मृदा निबरिया।
सूरज पासी घुह
मे किरना कीतिया,
निधी कीती बह
मे बभिया पीतिया।
जानम ते निय कद
मे कीता भुप तों
कई माप बिब पद
उह जागों भुप मे।
ताप बरिजी घाल
मे मुता टाल न
बलक सारियां गाल
मे लइयां कोरिया।
भेरा लिया बिठाल
मे बहुरेदार सो
हुई न देय उठाल
मे राती गुतिया।

[मैं बरतीको माथमें बँधा करता रहा। मिट्टीमें जड़ें जमाकर मैं
भोजन प्राप्त किया है। बहने माथमें जीं भरकर पानी पिया है एवं ओसको

बचकर मैं भाई हुआ हूँ। आकाशसे मेझोंको बुलाकर मैं पानी लीया है। उस पानीसे गूब गहूँकर मैं निकल गया हूँ। धूपसे मैं किरणें छिनी है। अपनी आरमाको ऊँचता प्रशान करके मैं बड़ा और फूला-फूला हूँ। चाँदनी की छास ओढ़कर मैं रात्रिको सोता हूँ। तारोंका चमकस मैं लोरियाँ ली है। झँझरेको मैं पहरेशार बनाकर बिठा लिया है ताकि मुझ कोई जमा न हो।]

भाई साहब प्रकृतिको कोई बौतिक वस्तु नहीं मानते वे इसे ननुप्य शक्तिका बलत्कार समझते हैं। प्रकृतिसे सौम्यरसका इतना आकर्षक वर्णन केवल भाई बीरसिंहकी कवितामें ही मिलता है। प्रकृतिमें य अपने अराध्य देवकी शक्त केवने है। कवि प्राप्त कालमें लिखे हुए महाबलके सौम्यरस किर्या अलौकिक छविके बयान करता है —

अजग गुर वे तड़के
जहाँ से रही ती लखेर अँधड़-इयाँ
पहुँ फुलासे बी गोब बिब
सुयीं खोल रहे समी मेरे साँझी।
किन्न हूँ किन्न! या धए समी
ओत निकी गोब बिब ?
मेरे खेडे बडे विद्याल साँझी

[आज जब अर्धशतक उपा भँगड़ाई से रही बी अब एन लिखे हुए स्निग्ध मुकाबलें तुम लक रहूँ। इतने विद्याल मेरे विद्याल! कैसे? हाँ कैसे या धए उन छोटी-सी मोचमें?]

इनकी दृष्टिमें प्रकृति ही मानव समाजकी सारी समस्याओंका एक मात्र हल है। इनकी धारणा है कि जो व्यक्ति एक बार प्रकृतिके रहस्यमय रूपको पहचान गया वहीं मुक्ति है। गुप्तकी अम्य सांसारिक परिभाषाओंमें इनका विश्वास नहीं है। उनकी तरफसे य उदासीन हो जाते हैं।

भाई बीरसिंह प्रकृतिके अमर्षी रहस्यकी गोब करने हुए कहते हैं कि प्रकृति निहारनकी कष्ट है प्रपंचमें आनंद नहीं। यह एक बड़का बात है जिसमें मनुष्य हरेक क्षणकी देखभाल रम भोगी हो सकता है। भाई साहब बहसबाबकी भाँति प्रकृतिके चितेरे हैं। वे मानते हैं कि प्रकृति मनुष्यकी बी है जो अपनी गुप्त दीर्घमें बीठाकर मनुष्यको लोरियाँ देती है।

बैत-प्रमत्त की भावना

बाबोबर्कन माई वीरसिंहके प्रपन्न भुगकी धाराओं बधवा प्रमावसि मिलिय एतका पत्रवा दकर उनकी कहा माल-बना की है। इस बातमें कोई सन्देह नहीं कि माई साहब उन प्रवर्तिनीस आसे-बर्कनके माप-वर्णने अनुसार एक प्रतिनिध्यावाही कवि हैं। किन्तु कुछ विचारार्थक जाकाचर इन्हें अपन भुगकी परित्वसिपके अनुसार एक सभन और मानकतावाह कवि मानकर उनके प्रतिनिध्यावाही हुनकी मापताको कमबार कर देते हैं।

माई वीरसिंहके जीवन-व्ययन मानक-प्रम बधवा सामाजिक सेवाको बिनाप महत्त्व प्राप्त है। उक्त धपका बहु सिद्धान्त जिसके द्वारा जीवन-दान एवं बलिदानका पाठ पढ़ाया गया है। माई वीरसिंहके कवितामें वन-वन बिलस पड़ा है। देशकी परवर्तता इनका बजरी है। गङ्गा-राम इनकी स्वतन्त्रता सम्बन्धी एक सम्झी कविता है, जिसमें उनकी स्वतन्त्रताके लिए एक वक्ष है ब्यवा है और है एक दर्ब।

माई वीरसिंहका अपन दसकी हरेक परम्परा—धर्म संस्कृति और कला इनकी अधिक प्रिय है कि ये अपन आपका किसी एक धर्म या मतमें बंधा हुआ नहीं देखते। ये एक सम्झे राष्ट्रवादी हैं। उनका विचार है कि कौनक कला मूर्तिकला चित्रकला कविता भाषा सारे ससारको कलाएँ हैं। इनका सहज-सीम्हद मनुष्य-मानकी पूर्व है।

महान् परम्पराके बारिस

प्राकृतिक छटा प्रथम बधवा किसी और योद्धाकी अक्रियता की शक्ति के अनुभव करके मनुष्य करवस गा उठा। उसके धर्म सङ्गीत और धारका सहारा लेकर वहीमे वा टोलेका प्रस्था बन गए और इनीको कविता कहा जान गया। वही दूसरोंके लिए बोल्ने या मानवाका बलि समाजका प्रतिनिधि और आवाज बन गया। कविता एक राष्ट्रकी बहुमुख सम्पत्ति बन गई।

प्राचीन कालसे ही भारतीय-आत्म-परम्परा धार्मिक धाराकी पोषक रही है। हमारे देशका समुदाय जकवायू ही इस परम्पराके अनुकूल रहा है। पञ्जाबी के प्रथम मूर्ति बलि बाबा फरीदग बाणसी मरीमें इस अध्यात्मिक कविताकी परम्पराका आय बजाया। इसी कालमें पञ्जाबीमें वीरसिंह की बार मिली गई। नौ बारें तो धुन-धन्य भावमें संगृहीत हैं।

पञ्जाबी कविताकी सबसे शक्तिशाली परम्परा अध्यात्मवादीकी थी। आप फकी योगी और बाबा फरीदके बाद सिध मुह इस परम्पराके महान् बारिस थे।

पञ्जाबी कवितामें आध्यात्मवादी परम्पराको सूफी कवितासे अत्यधिक बल मिला। साई बीरसिंहकी कवितापर सूफी-दर्शनका प्रभाव प्रत्यक्ष है।

साई बीरसिंह सिल कवि अक्षय्य ब बजोकि सिल घर्मक ईसा उन्हीं
 घरमें जपन बचपनसे मिली भी किन्तु समूचे तौरपर पञ्जाबी साहित्यके आदि
 काव्यसे केहर अपने समय तकको परम्पराओंको ग्रहण किया था। य पञ्जाबी
 साहित्यके नवयुगके निर्माता ब। एक अच्छे बारिसको भ्रांति इन्होंने पञ्जाबी
 कविताको पूर्ण कवियेके उद्यम्य भाग बताया।

१० जून १९५७ ई में पञ्जाबी भाषाके इस महान सन्त-कविका निधन
 पचासी वर्षकी आयुमें हो जानेसे पञ्जाबी साहित्य-मण्डलका एक ऐसा नक्षत्र टूट
 गया जिसकी पुति होनी असम्भव है।

• • •

भाई वीरसिंह

[काव्य-सञ्चय]

१ समा



एही बास्ते घस्त, समें ने हक न मघी ।
 फट फट रहो धरोक, समें लिसकाई कमी ।
 किले न सकी रोक, अटक जो पाई मघी ।
 मिसे अपने बेध, गया टप बने बघी—
 हा ! अजे समाल इस समें नू,
 कर सकल उबन्धा आववा ।
 इह ठहरन जाच न जाचवा,
 लय गया न मुकळे आववा ।



२ त्रेल तुपका



मोती बागू जसकवा तुपका इह जो बेस ।
 गोडी पीठ गुसाय बी हस हस करवा बेस ।
 वासी लेन अदय बा करवा प्यार अपार ।
 बपवान है हो गया प्यारी गोब बिघाल ।
 अरयो किरन इक आवसो लैसी एस मुकाय ।
 मोरा मत फुई पीन बा बेये धरत गिराय ।
 नित प्यार जिन्ना स्याबवा करे मदयो हय ।
 अरयो प्रीतम है फुई नित फिर करे अदय ॥

१ समय



मने दही अनुनय विनय की किन्तु समय ने मेरी एक न मानी। मैं पकड़ती ही रह गई, मगर 'समय' अपना पल्ला छुड़ा ले गया। मैंने सब प्रयास किए, पर उसे रोक न सकी। अपनी तीव्र गतिसे वह सब सीमाओंको लाँघता हुआ चला गया।

ऐ मनुष्य ! इस गतिशील समयको तू देख। यह रुकना नहीं जानता। एक बार जो बीत गया, वह फिर लौटकर नहीं आएगा।



२ ओसकी धूँद



मुक्ताके समान चमकती यह ओसकी धूँद गुलाबकी गोदीमें बैठ हँस-हँसकर क्रीड़ा करती है। अबूदय बेघाका वासी यह गुलाबका फूल इसके लिए अपना सारा प्रेम उँढ़े देता है, और वह उसको प्रेममय गादमें बपमान हो गया है। सूर्यकी एक किरण आएगी। वह इस ओसकी धूँदको अपनेमें छिपा लगी कि कहीं वामुका कोई झोंका इसे घरा पर गिरा न दे।

एसे ही प्रेमकी आकर्षण-शक्ति मनुष्यको अबूदयसे रूपवान बना देती है, किन्तु उसे फिर अबूदय बना देनेवाला कोई सर्व शक्तिमान भी है।



कवि-श्री माता ————— ●

३ पलपला



जिन्हां उज्वाडिमां उल्लो,
 बुद्धि संम साङ्ग बढी,
 मत्तो मत्ती उत्थे बिल,
 मारबा उडारियाँ ।
 प्याले मनडिठे मास
 बुल्क सम बाप जये
 रस ते सरुर चडे
 झूमां औण प्यारियाँ ॥१॥

‘जानी सानू होकबा ते
 ‘बहुमी डोला मासबा ए —
 ‘मारे गए जिन्हां साईमां
 पुढों पार तारियाँ । ॥२॥

“बेठ बे जानी । बुघी
 महले ही कब बिष्ट
 ‘बलबल बे बेदा साडीयां
 सग गइयां पारियाँ ।” ॥३॥

३ भाव-लोक



जिस ठेकाईसे बुद्धि अपने पख जलाकर घरापर जा गिरी, मेरा मन बरबस वहाँ पहुँचनेके लिए आगुल ह । वहाँ किसी अदृश्य व्यापको मेरे ओंठ छू लेंगे, तो मैं रस विभोर हो झूमने लग जाऊँगा ॥१॥

ज्ञानका दावेदार मेरा मार्ग अवश्यकर खड़ा हो गया है । अन्ध-विश्वासी कहता है—ओ बुद्धिसे परे पहुँचनेका प्रयास करते हैं, वही गिरते हैं ॥२॥

ज्ञानके दावेदारो ! तुम बुद्धिकी नींवमें अकड़े बैठे रहो । मने तो भाव-लोकमें मित्रताकी गाँठ बाँध ली है ॥३॥



॥ दुकड़ी जग तों न्यारी

मरणां वे बिचव 'कुबरत बेवी सानू नयरी आई ।
 हुस्त मडल बिचव काडी सोडवी सुशिया छह्वर आई ।
 बोडी ने इक मुठ भर लीतो इस बिचव की की माया
 परलत टिळो अते करेवे बिचव मंदान लुहाया ।
 बडने, माते, नवियां, झीसां निकले जिबें समुन्दर ।
 ठंडियां द्वावां मिठियां हुवावां बल बागां मिहे सुंदर ।
 बरफां, भीह, घुप्पां ते बबल दलां मेवे प्यारे ।
 मरसी नात नमारे जाए उस मुठी बिचव सारे ॥१॥

मुहवी ने अस्मान काढ़के धरती बल तका के ।
 इह मुठी खोहसी ते बुहिया सब कृष हेट तकाके ।
 जिस धामे धरती ते आके इह मुठ दिगधी सारी ।
 मोस थी 'कश्मीर बज गया दुकड़ी जग तों न्यारी ॥२॥

हे धरती पर 'छूह अस्मानी
 सुन्दरता बिचव लियने ।
 धरती बे रत, स्वाद, नमारे,
 'रमज अरवा बी कसने ॥२॥

॥ दुकन्ती जगसे न्यारी

सौन्दर्य लोकमें ब्रीड़ाएँ करती हर्षसे मदमाती प्रकृतिकी देवी
 मैंने देखी । उसने अपनी मूठमें पर्वत टीले रमणीय मैदान और झरने
 नदियाँ झीलें भर लीं । ये सब ऐसे थे जैसे छोटे-छोटे द्वीप हों । घीतल
 छाया भीनी हवा और सुन्दर वनोंकी महक हिम-वर्ण वर्षा घूप और
 बादल, भीठे मौसमी फल—ये सभी एक देवी दृश्य सरोखे उसकी मूठमें
 बा गए ॥१॥

दूर व्योमसे पृथ्वीको निहारते हुए प्रकृतिकी देवीने अपनी मुदठी
 खोल दी । जहाँपर वह मूठ गिरी वहाँ संसारकी अनूठी टुकड़ी कश्मीर-
 का जन्म हो गया ॥२॥

रस सुगन्ध भीर वृक्षोंक आयाम लिए यह टुकड़ी देव-लोकसे
 धरापर उतर आई ॥३॥

कवि-श्री माता

४ दुकड़ी जग तों न्यारी

मरणां बे बिजय 'कुबरत बेवी' सानू नजरी आई ।
 हुस्न-मंडल बिजय लड़ी लोडवी खुशियां छह्वर आई ।
 दौड़ी ने इक मुठ पर लीतो इस बिजय की की माया
 परबत टिब्बो असे करेबे बिजय मंडान सुहाया ।
 जयने, नाले, नवियां, शीसां निक्के जिबे समुन्दर ।
 ठडियां छावां मिठियां हवावां बन बागां जिहे सुंदर ।
 बरफां, भीह, धुप्पां ले बबल रसां मेवे प्यारे ।
 मरणां नास नजारे माए उस मुठी बिजय सारे ॥१॥

मुहवी ने अस्मान लड़ाके धरती बस तका के ।
 इह मुठी लोहली ते मुहिया सब कुछ हेठ तकाके ।
 जिस बाबे धरती ते माके इह मुठ बिगड़ी सारी ।
 मोस वां 'कजमीर' बण गया दुकड़ी जग तों न्यारी ॥२॥

हे धरती पर 'सूह अस्मानी'
 सुन्दरता बिजय तिक्के ।
 धरती बे रस, स्वाद, नजारे,
 'रमस मरणा' बी कसके ॥२॥

४ टुकड़ी जगसे न्यारी

सौन्दर्य लोकमें कीड़ाएँ करती हर्षसे मवमाती, प्रकृतिकी देवी मैंने देखी । उसने अपनी मूठमें पर्वत टीले रमणीय मैदान और झरने नदियाँ झीलें भर लीं । ये सब ऐसे थ जैसे छोटे छोटे द्वीप हों । धीतल छाया भीमी हवा और सुन्दर बनोंकी महक, हिम-बर्फ वर्षा धूप और बादल मीठे मौसमी फल—ये सभी एक देवी दुख्य सरोबे उसकी मूठमें आ गए ॥१॥

दूर ध्योमसे पृथ्वीको निहारत हुए प्रकृतिकी स्त्रीने अपनी मुट्ठी खोल दी । जहाँपर वह मूठ गिरी वहाँ संसारकी अनूठी टुकड़ी कश्मीर-का जन्म हो गया ॥२॥

रस सुपुष्प और दुस्त्रियोंके आश्रम लिए यह टुकड़ी देव-लोकसे धरापर उतर आई ॥३॥

५. कियकर



कठ सिरि ऊपर नू दुरिया बस आकाशा जाबा ।
 उपर नू तर्का रख बने साति न होरये पाबा ।
 शहर गिरा महल नहों भाड़ी कुस्ती डोक न भासा ।
 मीह हमेरी गड़े धुप बिजब मगे सिर बिन धासा ।
 सो मरफा बे माली बसे होर साससा माहीं ।
 गिठ थाऊ छरसी, तों सीसी बया, टिका, इस माहीं ।
 फुस्ती, फसा, सिङी, रस बोवा रह मछोत दुर जाबा ।
 कुस्ती, गुस्ती, जुस्ती बुनिया ! बिन मगे मर जाबा ॥१॥

मीह बा पीवा पाणी बुनिया पीण बसके बीबा ।
 सदिया तों इसपित न जोणी सदिया हूँ टिकीबा ।
 छेबा छेड़ कराबा माहीं हां मिरकत निर्गुनिया
 मेरे ओगा मी हूँ पस्ते हाथ । कुहावा, बुनिया ! ॥२॥



५. तूतू



[स्थिर एवं अद्विग्न मनसे खड़ा बभूषका वृक्ष यमने हृदय-तरोलित भाव व्यक्त करता हुआ कहता है ।]

मैं आकाशकी ओर स्थिर जैसा किए खड़ा हूँ । भगवानकी ओर ऊपर निहार रहा हूँ । मेरी दृष्टि स्थिर नहीं है । न शहर, न ग्राम और न किसी महल या झोपड़ीकी मुझे सलास है । मेह हो चाहे औधी—सारा दिन मग्न खड़ा रहकर बिता देता हूँ । देव-लोकके बिना मुझे और कोई आसना नहीं है । धरतीसे माँगकर मैंने एक हाथ भूमि ले रखी है यहीं मैं बड़ता हूँ और यहीं मेरा ठिकाना है । फूसला-फूसला, रस टपकाता एक दिन सत्कारसे बिना कुछ माँगे एकाकी चल देता हूँ ॥१॥

मैं बाबलोंका पानी पी सोंसोंमें पवन भरकर जीता हूँ । सदियोंसे स्थिर खड़ा योगी हूँ । न किसीसे मेरी शत्रुता न किसीसे मेरा वैर है । मैं तो एक विरक्त निगुण हूँ । फिर भी संसारकी कुल्हाड़ी सदा मेरे सिरपर रहती है ॥२॥



५ कियकर

कियकर

रुड सिरी ऊपर नू ठुरिया वरु माकाशा जाया ।
उपर नू तका रख बने साति न होरये पाया ।
हाहर गिरा महस नहीं भाको कुस्ती डोक न भासा ।
मोह हनेरी गड़े घुण्य बिज्ज मये सिर दिन थाला ।
को अरसा बे वाली बने होर साससा माहीं ।
मिठ चाऊ घरती, तों लीली बघा, टिका, इस माहीं ।
फुस्सा, कला, बिदा, रस बोबां रह अछोत तुर जाया ।
कुस्ती, गुस्ती, जुस्ती बुनियां ! बिन मोर्गे घर जाया ॥१॥

मोह बा पीबां पायो बुनियां पीण भबको बीबां ।
सदियो तों इसचित मे जोगी सदियो हूँ टिकीयो ।
छेडा छेड़ बरावां माहीं हां बिरक्त निर्गुनियां
मेरे जोगा बी हूँ पस्ते हाय ! कुहाड़ा, बुनियां ! ॥२॥

५. तबूत



[स्विर एवं अन्य रूपसे खड़ा बनूँका मूँ अपने हृदय-तरंगित भाव व्यक्त करता हुआ पहुँचा है।]

मैं आकाशकी ओर सिर ऊँचा किए खड़ा हूँ। भगवानकी ओर ऊपर निहान रहा हूँ। मेरी दृष्टि स्थिर नहीं है। न शहर, न ग्राम और न किसी महल या झोपड़ीकी मुझे उछाव है। मेह हो पाहे भीषी—साय बिन मगा खड़ा रहकर बिता देता हूँ। दब-छाकके बिना मुझे और कोई सालसा नहीं है। धरतीसे भाँगकर मैंने एक हाथ भूमि से रखी है यहीं मैं बड़ा हूँ और यहीं मेरा ठिकाना है। फूँकता-फूलता, रस टपकाता, एक दिन ससारसे बिना कुछ भाँसे एकाकी चल देता हूँ ॥१॥

मैं बाल्लोंका पानी पी साँसोंमें पवन भरकर पीता हूँ। सदियोंसे स्थिर खड़ा योगी हूँ। न किसीसे मरी सजुता न किसीस मेरा बैर है। मैं तो एक विरक्त नियुण हूँ। फिर भी संसारकी झुल्लाड़ी सदा मेरे सिरपर रहती है ॥२॥



कवि-धी माला—

६ अवंतीपुरे के खंहर

अवंतीपुरा की रह गया बाकी,
 वो मन्बिरा के डेर ।
 बीत चुकी सम्पत्ता के कडर,
 बसबे समे के फेर ।
 साखी मर रहे ओस अन्न की
 जिस बिच मोतियाबिन्द ।
 हुनर पछानण बरों छाया,
 गुन भी रही न निम्ब ।
 'जोश-मज्जहूब' ते 'कबर-हुनर' की,
 रही न ठीक समीज ।
 राजी करबे होरा-साई,
 मापू बन्ने मरीज ।
 भुत पूजा ? 'भुत' फेर हो पए,
 'हुनर' न परतया, हाय !
 मर मरके 'भुत' फेर उगम पए,
 गुन नू बीज जीवाइ ?

६ अश्वत्थीपुराके खण्डहर

*अश्वत्थीपुरा दो मन्दिरोंका ढेर माफ रह गया है। बीती सभ्यताने ये मज्जाबगेप समयके ढेर फेरकी ओर इंगित कर रहे हैं।

और मोतिया-बिन्दवाली उस आँखकी साखी भर रहे हैं जिसे कल-कौमलकी परत नहीं रह गई है। चर्माछ पुबारी कलाकी कद्व करना भूल गए हैं। मूर्ति-भूजाने फिर सिर उठाया है।

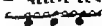
बिन्दु हाय ! वह बसा कहाँ गई ? मर-मरकर 'मूर्तियाँ जन्म आईं। कौन है जो फिरसे गुण को जीवन-दान दगा।

* भीमनगर और मनम माफके बीचके दो प्राचीन मन्दिरोंके खण्डहर।

। कालामार

जोगी लड़े बनार, शांति बस रही
 नहर बहे बिचकार बुसी प्रवाह ज्यों ।
 हरिया भरिया बल मलमल बाह बा,
 छाह सहज बा रंग शांति एकल है ।
 फिर आई अवधार बाणी इह पिया
 अल्प संगति उचार मन नुं मोह रिहा ।
 रंग बलौरी बल डिग्यवे बा लसे,
 फिर कुस कदमा लख हेठा जाव बा ॥१॥
 बिच कुहारिया जाय उपर जावदा,
 कलाबाजिया जाय उच्छले खेडवा ।
 सावे डाढा खोर पहल उचान नुं,
 पहुँचा मार उछाल पर 'सिख' रोकरी ।
 उच्छा जाव 'सिख' फिर लं देखबी,
 उच्छल गिरन बा माच हूवे हा रिहा ।
 बिच विचाल अजीब बारी-बारी है,
 घाम रंग बा संय जिसतों बणी है ।
 इसवे धार बुफेर पाणी खेडवा,
 जठल डिग्यल बा माच मासे राग है
 मानो सावन मीह हूवे प रिहा ।
 ओ अस्मानों डिग्य हेठा जावदा,
 इह हेठों बाह पाड़ उच्छल बस्तदा ।
 इसवी धुनि संगित धमक सुहावनी ॥२॥
 बेठिया इस बिचकार फूटे देखबी,
 कुबरत मामो आप नच रही माच है ।
 इह रंग राग अपार बसके मोर जो,
 फिर अणो नू जाय हेठा तिसकवे ॥३॥

७ वातामार



वनार-रूपी योगी खड़े हैं। छात्रिकी वर्षा हो रही है। वृत्तिके प्रवाहकी भाँति बीचमें नहर बह रही है। सहज एकाग्रताके रगमें रंगी हरी धरी मखमली घास बिछी हुई है। झर-झर बहते झरनेके पानीका कसरव बड़ा मोहक है। विस्तीर्ण रगकी दमक लिए कुछ पग आगे फम्बारोंके उमरसे हो-होकर वह कसाबाजी खोल रहा है ॥१॥

वह एक अजीब उछल-कूदका मुरप कर रहा है, चाहता है कि मैं उछलकर ऊँचा पहुँच जाऊँ, किन्तु 'आकर्षण' उसे फिर नीचे पटक देता है। वागके मध्य एक बारा-बरी है। उसके चारों ओर पानी सन्ध्याके सग मिस्रकर मठस्रिप्पा करता है। गिरकर उठने फिर गिरनेके ये नृत्य-संगीत ऐसे हैं जैसे साबनकी फूहार बरस रही हो। वह आकाशसे धरापर बरसती है यह भूमिसे राह निकाल ऊपरका उछलता है। इसकी संगीतमय ध्वनि सुहानी बमक-दमक झूलेका-सा आनन्द देती है ॥२॥

ऐसा प्रतीत होता है जैसे प्रकृति स्वयं मुरप कर रही हो। अपना रूप रग, संगीत छिड़ककर वह फिर आगेकी ओर फिसल जाता है ॥३॥

८ कवदे पाथर

भारतभू नू भार पदया
 'होई गुहत' कहिम्बी सोई ।
 पर कवधी पथरा बिच तुष तक
 सानू सी सहो होई ।
 'हाय, हुनर से हाय विधा,
 'हाय बेस बी हासत ।
 'हाय हिम कस काङ्गिया वाले ।
 हर शिक कहिम्बी रोई ।

९ कवदी कलार्थ

सुपने बिच तुसी मिले असानू असी धा गलबकड़ी पाई ।
 निरा मूर तुसी हत्य न भाए साडी कवधी रही कसाई ।
 धा चरणां ते सीस निबाया साडे मरने छोह न पाई ।
 तुसी उठे असी नीबे सां साडी पेया न मईया काई ।
 फिर सङ्ग कङ्गने नू उठ बीहे पर सङ्ग आहे 'बिजलीलहरा'
 उठवा जादा पर ओह अपणी छाहे सानू गया साई
 मिट्टी चमक पई इह मोई ते तुसी लूया बिच सिपके,
 बिजली कूब गई चरीदी तुम बकापूष है छाई ।

८ धरधराते पायाण

किम्बदन्ती ह कि यासबड*को भस्मसात् हुए एक युग बीत गया ।
धरधराते पापाजोंने भी यही बताया । और एक-एक छिछा गे-रीकर
कहने लगी—

हाय कला-कौशल ! हाय बेत ! ! तेरी यह बसा ! तू छिछका
उतरे फसकी भाँति टुकड़ोंमें बिखर गया !

९ कलाईकी कम्पन

तुम सपनेमें आए । मैंने तुम्हें आसिगम-बद्ध कर लिया, किन्तु तुम
सा भ्रष्टर मे । मेरी पकड़में नहीं आए । मेरी बलाई कौपदी रह गई ।

मैंने बरबस करणोंपर भाषा टेक लिया किन्तु भाषा बिना स्पर्शके
ही रह गया । तुम ऊँचे थे, मैं नीचा । मेरे बसकी बात नहीं थी ।

मैं पल्ला पकड़नेके लिए भागा । बिजलीकी लहरोंकी-सी गतिसे
पल्ला उड़ गया । जाते-जाते वह अपना स्पर्श देता गया ।

निष्प्राण मिट्टीमें प्राण फूँककर तुम रोम रोममें एंस समा गए, जैसे
विजली दौंस जानेसे पकाबौंस छा जाए ।

* सरपारके एक बीडकालीन सूर्य-मान्दिरका मन्त्रावधय जो कभी सार्गस-बिदाका
एक प्रसिद्ध कैव्य था ।

१० हल्म, अमल

सिर कचवील बना हृत्प सीता,
पडियाँ द्वारे फिरिया,
बर बर बे टुक मग मग पाए,
तुन तुम के इह भरिया, ॥१॥

भरिया बेस भाकरिया मैं साँ,
बाणा पण्डित होया,—
ठिके न पर जियों ते मेरा
जन्मा हो ही टुरिया ॥२॥

इक दिन इह कचवील लै गया,
मुरासब मूहरे धरिया
जूठ जूठकर जस उलटाया,
काली सारा करिया ॥३॥

मस मसके फिर घोता इसनू,
मेस इलम बी साही,
बेजो, इह कचवील सिद्धिया ।
कैवस बाँग फिर सिद्धिया ॥४॥

१० विद्या और भ्रमल

सिरको प्यासा बनाकर मैं बिछाके डारपर मिछारी बनकर घूमने लगा । घर घरसे भीख माँगकर मैंने इसे टूँस-टूँसकर भर लिया ॥१॥

प्यासेको मरा देकर समझा, बस मैं जानी हो गया । मेरे पैर घर पर कहीं टिकते ? मैं ऊँचा हो, एड़ियाँ चठाए चलने लगा ॥२॥

एक दिन यह प्यासा मैंने अपने मुरघिदके आगे जा रखा । उसने जूठन कहकर इसको ठसटा, और खासी कर दिया ॥३॥

फिर इसे मल-मलकर धोया । बिछाना सारा मैंने उधार दिया । अब इसे प्यासेको देखो, कमलकी भाँति फिर बिल उठा है ॥४॥

११ गुलाब दा फुल तोड़न वाले नूँ

डासी नासों तोड़ न सागू,
असां रह 'महक' बी जाई ।

सस माहक जे तुंघे आले,
काली कोय न जाई ।

तू जे इह तोड़के लै गयो,
इक जागो रह जासा—

ओह बी पलक झलक दा मेला,
रप महक नस जाई ।

११ गुलाबका फूल तोड़नेवालेको

तू डालते मुझे मत तोड़ ! मैंने गन्धर्भी ठूकाम सजा रखी है ।
 सूँघनेवाले लाख ग्राहक भी आ जाएँ, तो भी मैं किसीको खाली न जाने
 दूँगा । तोड़ लेनेपर मैं तेरे लिए ही रह जाऊँगा । वह भी कुछ
 क्षणोंकी बात होगी । मेरा रूप-लावण्य एवं सुगन्ध सभी पलक
 मारते ही उड़ जाएँगे ।

१२. पिंजरे पया पंखी

[पिंजरे की सभागत करनवाते नू]

जासम सङ्गा हवा कुली बिच,
 भासे 'पिंजरा सुहणा'—॥१॥
 'बिच आ जाबें फिर में पुच्छा,
 किआ है मन मुहणा ?
 'पर तों हीन घरा बे कैंबी !
 मो मूर्ख बिस करदे !
 उठुन हारे पछी नू इह,
 सुहणा है जिनब—सुहणा !
 जासम नू रंग सोहणा सगा,
 मिट्ठी सगो वाणी—
 बाह बाह कबर गुना बी पार्ई ॥२॥
 छह के जाली ताणो ।
 पकड़ पिंजरे पाये बिछौड़िया,
 साक स्नेहिण्यां मासों,
 भट्ठ पबे इह कबर सुहाओ
 सेह इस 'यारी' साणी ।

१२. पिंजरेका पंखी

[पिंजरेकी सराहना करनेवालेके प्रति]

बुरी बापुमें साँस सेते हुए जालिम कहता है— पिंजरा कितना सुन्दर है। ॥१॥

‘ कठोर दृढ रखनेवाले मूर्ख ! भीतर जानेपर मैं तुझसे पूछूँ कि पिंजरा कितना मोहक है ! मैं पक्ष विहीन पंखी इस घराका बन्दी बन गया हूँ । यह मुक्त आवावरणमें उड़ान भरनेवालोंके प्राणोका भक्षक है । सुन्दर रंग, मधुर बाणी देख-सुनकर तूने छिपकर जाल फैलाया । मेरे गुणोंकी तूने अच्छी कद्र की ॥२॥

सभी रिश्ते-नाते छुड़वाकर मुझे पिंजरेका बन्दी बना दिया । तेरी यह गुण-वाहकता भाइमें जाय । तेरे संग मैं कैसे मित्रताकी माँठ बाँधूँ ! ” ॥३॥

१२ जीनत वेगम

सोहणे सोहणे महस व्यसावे
 बेकण भाइयो सहियो !
 इक तों इक चढ़वे नकशे,
 बेक बेक रज रहियो,
 पर इक नकश गुप्त इगहा बिच,
 हर मुकसे बिच लिखिया,
 पड़े बास उस नकश अटसमें,
 सहियो न मुड़ जाइयो !
 ए नकशे — मरणाग रगीला,
 कइसी जाँबा पाँवा,
 नासो नास न ब तों कोई,
 गुप्त नकश इक बाँवा ।

उह सी नकश बिछोड़ा सहियो
 असी निपुटिया पड़िया
 काय ! कवे इह नकश मेरा उह,
 जासम बी पड़ लबा ।

१४. ज्ञानित दोन

● ● ●

ऐ सखि ! मेरे सुन्दर महलोंको देखने आना । इनकी एबसे एक बढ़कर आकृतिको देख-देखकर तुम्हाग मम नहीं करेगा । किन्तु इनके प्रत्येक चिह्नमें एक गोपनीय आकृति भी है जिसे बिना पढ़े नष्ट हो जाता । अब नक्काश इन आकृतियोंमें प्राण डाल रहा था तो कोई अव्यक्त-शक्ति एक गोपनीय आकृतिको उघाड़ जाती थी ।

सखियो, अभगिन मने जब उस पड़ा सा बह बिछाह की एक आकृति थी । काश ! कभी बह जाग्रिम भी मरी इस आकृतिका पढ़ पाता !

—————

३४. अम्बर ची टेक

सिक सिक रो रो दूँ दूँ के
मजनुं उम्र गवाई ।
पर पेंघर न खाबी ससी,
छा उस पास न आई ।
अम्त हारके बह गया मजनुं,
सैसी सैसी जपदा ।
सिब सैसी बिच लग गई अम्बर,
अम्बर संसी आई । ॥१॥

सैसी बी ठुप बिच साथ के,
मजनुं लम्बी आई ।
मैं लली, लसी पर कूके,
मजनुं सिपाण ना आई ।
मैं सैसी, न सैसी कूके,
मजनुं समी होया ।
भापे प्रीतम बण गया प्रेमी,
टेक जाँ अम्बर पाई । ॥२॥

१४ भीतरकी टेक

मज्जुने सिसकियाँ भरते रो-रोकर सारी आयु बिता दी। किन्तु सैला न पिपली और न उसके पास खरबूर आई। अन्तमें हताश होकर मज्जु सैलाका नाम सेता मौन होकर बैठ गया। सैलामें वह इतना समय हो गया कि उसके भीतर सैला आ गई ॥१॥

सैला इस आश्चर्यवश मज्जुका दूढ़सी आई। उसकी में सैला में सैला की पुकारसे भी मज्जु उसे पहचान न पाया।

मज्जु सैलाका रूप हो गया। जब भीतरकी टेक मिली तो प्रियतम स्वयं ही प्रेमिका बन गया ॥२॥

—————

कवि-श्री माता

१५. चवामा कष्टला यत्न ते हूँ गिरायी कामां

प्रश्न —

सम होई परछावें छुव गये
 किऊँ इच्छाबल तूँ जारी ?
 नें सरोब कर रही जवें ही
 ते दुरमों की नहीं हारी,
 सैलानो ते पक्षी मासी
 हल सब भाराम बिच जाये,
 सहम स्वाबला छा रिहा सारे
 ते कुबरात ठिक गई सारी ।

चवामे का उत्तर —

सीने सिख बिगहा ने लाधी
 उह कर भाराम नहीं बहिदे ।
 निहुँ वाले नैना की मीबर
 उह दिन रात पये बहिदे ।
 इको सगन सगो लई जाबी
 है डोर मनस्त उगहा बी,
 घससों जरे मुकाम न कोई,
 सो आल पये निपट रहिदे ।

१५. * इच्छा बलका धरना और गहरी सन्ध्या

प्रश्न —

साँझ ठल आई है। साये छिप गए हैं। पर इच्छा बल तू क्यों वहा चला जा रहा है? न तो तू चुप हो रहा है और न चरते-चरते बक ही रहा है। सैमानी पंछी और माछी सब विध्वाम करने चले गये हैं। चारों ओर स्तब्धता छा गई है तथा समस्त प्रकृति शान्त हो गई है।

जम्मेका उत्तर —

जिनक सीनेमें प्रगति पथपर बढ़नेकी बलवती इच्छा होती है वे आरामसे नहीं बैठते हैं। प्रेम भीने नयनोंमें निद्रा नहीं आती है, वे तो सदैव आँसू बहाते हैं। एक लगन उन्हें चमाए जाती है। उनकी मति अनन्त होती है। मिलनसे पहले उनका कोई पड़ाव नहीं होता। वे सदा चरते ही रहते हैं।

१५. चवामा बरछा बल ते हुंगियी कामां

प्रश्न —

तस होई परछाबे छुप पये
 किऊँ इच्छाबस तू जारी ?
 नें सरोब कर रहो जवें ही
 ते दुरजों बी महों हारी,
 सेलानो ते पंछी मासी
 हन सब भाराम बिच आवे,
 सहम स्वाबला छा टिहा सारे
 ते कुबरत टिक गई सारी ।

बशमे या उत्तर —

सीने सिच जिह्वा ने साघी
 जह कर भाराम नहीं बहिबे ।
 निहुँ बाले नैजा की नीबर
 जह बिम रत पये बहिबे ।
 इको सगन समी सई जांबी
 है दोर अनस्त जह्वा बी,
 बसलों जरे मुकाम न कोई,
 सो बाल पये निपट रहिबे ।

१५. *हरखा तलका मरना और गहरी सन्ध्या

प्रश्न —

संज्ञ डल आई है । साये छिप गए हैं । पर हज्जा वल तू क्यों वहा बला जा रहा है ? न तो तू चुप हो रहा है और न बल्ले-बल्ले बक ही रहा है । सैलानी पंछी और जानी सब बियाम करने चले गये हैं । जारों ओर स्तब्धता छा गई है तथा समस्त प्रकृति शान्त हो गई है ।

जामेका उत्तर —

जिनके सीममें प्रगति पथपर बकुनकी बल्लवती हज्जा शान्ति है, वे आरामसे नहीं बैठे हैं । प्रम भीने मयनोंमें निद्रा नहीं आती है, वे तो सदैव जागू बहाते हैं । एक सगन उन्हें बलाए डाली है । उनकी गति अनन्त होती है । मिसलन पट्टा नका कोई पड्डा नहीं होता । न सदा बल्लन हा रहते हैं ।

१६ अमर रस

सोहणे हण सुराही प्यासा,
 बेस कुची सुस होई ।
 सुस होई मुस बेस सजण बा,
 बेस सुराही रोई ।
 रौबी बेस सजण हस आसे—
 कौडी पाराब न सपापा ।
 अमृत इह सुराही भरिया,
 पिये ते जोबे मोई ।
 बे इव बूब सुराहियों सानूं,
 सोय समुबर घोड़े ।
 बे सुरियां बे जाइ अश ते,
 आस अंबेसे तोड़े ।
 रग सुहाबे ते भीरंगी,
 पीम धुक्के आनम्बी ।
 आण हुकारे अमर सुसां बे,
 मुड़न ना ऐसा जोड़े ।

१६ अमर रस

प्रेमीके हाथमें सुराही और प्याला देखकर सुखिमारी हर्षसे बहक उठी । वह प्रेमीका मुख देखकर तो प्रफुल्ल हो गई, किन्तु सुराहीको देखकर रो पड़ी । उसे रोते हुए देखकर प्रेमीने हँसकर कहा—

“मैं कड़वी धारव नहीं लाया हूँ । इस सुराहीमें वह अमृत भरा है जो मुँहमें भी प्राण फूँक दे ।’

मुझे इस सुराहीमेंसे एक बूँद पिला दे ताकि मैं आशा-निराशाको भूलकर बे-बुद्धीके लोभमें पहुँच जाऊँ । वही मैं सुन्दर सुहान रंगोवासे झूलेमें बैठकर आनन्दमय हो जाऊँ और उसकी हिलोर मुझे सदैवके लिए अमर सुखमें लीन कर दे ।

१७ कश्मीर तों विवैगी

मुहाणोयाँ तों अब विछुड़न लगिये,
 बिल बिल-गीरी आवे ।
 पर तेषों दुरवियाँ कश्मीरे,
 सानूँ ना बुझ आवे ।
 घटक हिसोरा छोह तेरी बा,
 जो कहूँ साडी लीता ।
 छोड़े बाली मसती बे रिया,
 माल माल पिया आवे । ।

१८ मुहलर

मुस्तर तेरा कुसा मजारा
 बेल बेल बिल ठरिया
 सुसा, बहू, सोहया मुध्या,
 ताजा, हरिया भरिया,
 मुन्दरता तर रही तें जसे
 लुल जडारियाँ सबी
 मित्रन कबल कुँआरी रगत
 रस अनस्त बा भरिया ।

१७ कश्मीरसे पिदाई

प्रमियोंका विछाह हृदयकी उबासीका आवरण खोड़ा देता है,
 किन्तु ऐ कश्मीर ! तुमसे विशा होते समय मुझे कोई पीड़ा नहीं हो रही ।
 तेरे स्पर्शकी एक हिलोर मेरी आत्मामें समा गई है हर्ष-विभोर हुआ
 मैं उस अनुभूतिको अपने सग छिपे जा रहा हूँ ।

१८ पुष्कर

* पुष्कर । तेरा मुन्दर दृश्य देख कर हृदय धीतल हो गया है ।
 तू छुला, विराल मुन्दर पवित्र ताबा और हरा भरा है ।

तू सौन्दर्यस परिपूर्ण है । तुममें स्वतन्त्रता बिचरण कर रही है ।
 तुममें अदृश्य छवि एव अच्छूठे रंगाकी धारा प्रवाहित हो रही है ।

१९. चौदनी

मुद्रपाँ नासों निक्के निक्के
चौदनी बे पैर सहियो !
केसों बोझा मुद्रपाँ उल्ले
आन आन ठिकरे ॥१॥

ऐत्यो छासां मार टप
पैण छिट्टे पयरां ले
उल्ले कुंज हेट खड
पाणी उल्ले डिगरे ॥२॥

लहिरां बे उल्ले उल्ले
लिल मिल जेडवे नी
पोसे पोसे रख रख
धुमक धुमक ठिकरे ॥३॥

भाघ करन पाणी उल्ले
लासां मारन पीण विय
चौदनी बे मैण ऊयर
खन्ड बल तकरे ॥४॥

खड भरिया प्यार नास
तके यल चौदनी बे
तकन्दा ए सारा, सहियो
मसही जो हो रिहा ॥५॥

खानन खन्ड बेबंदा जे
खामन ए भाय सारा
खामनी बे खामने मू
बेस रोस जे रिहा ॥६॥

१९. घीवनी

हे सखी ! चाँदनीकी सूरिसे भी छोटे पैर देवदारके नुकीले पत्तोंपर
आकर पड़ते हैं । ॥१॥

यहाँसे छलंग मारकर द्योत प्रस्तर पर आते हैं और वहाँसे बूझ
कर नीचे खड्डके जलपर गिरत हैं । ॥२॥

झरोंपर तिम-मिल करते हुए ग्रीवा करते हैं और धीरे धीरे
ठुमुक-ठुमुककर कदम रखते हैं । ॥३॥

चन्द्रमाकी किरणें पानीके ऊपर इस तरहसे छिटक रही हैं मानो
वे पानीके ऊपर नाचती हुई कूद रही हों । चाँदनीकी आँखें चन्द्रमाकी
ओर देख रही हैं । ॥४॥

स्नेहमे परिपूर्ण चाँद चाँदनीकी ओर निहार रहा है और उसे
देखत-देखते वह स्वयं आँख ही बन गया है । ॥५॥

चन्द्रमा ज्योत्स्ना प्रगलन करता रहता है । यद्यपि वह स्वयं प्रकाशमय
है किन्तु फिर भी चाँदनीका आलोक देखकर मोहित हो रहा है । ॥६॥

जानने बे रूप प्यार
भेजवा ए चाँदनी नूँ
सगातार प्यार—मीह
चम्ब हेठ बे रिहा ॥७॥

चाँदनी ना सोम बी ह
हेठा किसे प्यार होए
ध्यान चम्ब बिच बिच
उताहां मन सँ रिहा ॥८॥

सकुँ मबी नालियाँ ते
जेता बनी जगनाँ ते
शहरी पिडाँ सममा ते
चाँदनी हूँ वै रही ॥९॥

राजियाँ ममीराँ ते गरीबाँ
पापी पुन्नियाँ बे
सारियाँ बे डारियाँ ते
जानपा हूँ वै रही ॥१०॥

व्यापी सारे बिसबी हूँ
सजत किसे बिच नाहूँ
ध्यान साया चम्ब बिच
चम्ब बिच वै रही ॥११॥

चम्ब प्यारे चाँदनी नूँ
जानबी सिबीये चम्ब
बस मात लोच रबाद
अरनाँ बा ल रही ॥१२॥

चन्द्र प्रकाशकपी प्यार चाँदनीको देता है एवं सतत भू पर
प्यारकी बर्पा करता है । ॥७॥

नीचे चाँदनी अन्य किसीके स्नेहके बशीभूत नहीं होती है । उसका
ध्यान चन्द्रमाकी ओर आकर्षित रहता है । ॥८॥

बड़े, सरिता तालों खेत, बनों, जंगलों, नगरों तथा ग्रामोंपर
चाँदनी छिटक रही है । ॥९॥

राजामों घमिकों, निर्धनों पापियों तथा धार्मिकों—इन सबके
द्वारोंपर प्रकाश दे रही है । ॥१०॥

ऐसा दृष्टिगोचर होता है कि चाँदनी सबमें व्याप्त है, परन्तु
किसीमें सीन नहीं है । इसका ध्यान चन्द्रमामें लगा है और उसी
ओर खिंची जा रही है । ॥११॥

राशि चाँदनीको प्यार करता है तथा चाँदनी चाँदको आकर्षित
करती है एवं वह धरापर छिटककर भी आकाशका-सा आनन्द अनुभव
कर रही है । ॥१२॥

२० जांदा आप ही ओखना दे वयार !

म बकरियां चार बी,
 बुपहरां बे घूरन सों धकी,
 चिनार बी छावें पत्पर शिखा ते बठी नूं,
 मेरे राजन ! तेरे सिपाहीने
 तेरा हुक्म सुनाया —
 'रस्त, हां अघी रात
 आ महलीं कड़का बरबाजा
 पातशाही महल बा
 पिछवाड़े पासे बा बरबाजा ।'
 सोलेगा आप आ राजा
 अपने बिबाड़ ।
 हां दसबीए खुसबीए ।
 मा गया ए राजा नूं,
 तेरा सीरां जपेटिया रुप । ॥१॥

कवली ते ओबरबी
 कवे अमला करबी
 कवे हासो समझबी,
 में तुर हो गई अघी रात ।
 तुरबी ते ठहरबी,
 कवे ठुमकबी, कवे फिरकबी,
 आ पटुबी हां तेरे बवार,
 राजा जी ! रोहसो बिबाड़ ! ॥२॥

६० उनके द्वार में स्वर्य जाता है !

मेरे राजन ! बकरियाँ बराती दोपहरीके सूपसे क्लान्त बिनारकी छायामें शिलापर बैठी मुझको तेरे सिपाहीने आज्ञा सुनाई कि आधी रातको मेरे महलके पिछवाड़ेका द्वार खटखटाना । राजा स्वयं अपने किवाड़ खोल देगा । गुप्तद्वीमें छिपा तेरा रूप राजाकी आँखोंमें समा गया है । ॥१॥

कौपदी-सिहरती कभी राजाक सन्दर्शको हँसी-भजाक समझती मैं आधी रातको चल दी । ठुमकती-धिरकती ठरे द्वार था पाई हूँ । राजाजी, किवाड़ खोलो । ॥२॥

मेरे भागों ने ज़िंदे ने मघ
 आ जुड़े ने पिच अकाश,
 छा गया हुनेरा जुझेर,
 आई ठोहकरां सांढी में डेर
 नपडी माता हा रुड़ धुट धुट
 आ पहुँची हाँ तेरे बजार,
 राजा जी ! लोहलो किबाड़ ! ॥३॥

* * *

लह पईयां नी बूँदां हुय, हाय !
 मुस्त पई ए पुरे बी पौन,
 मेरे राजा !
 गड़कधी ए बिजली अकाश,
 नाम पगजबी ए बबलां बी फौज ।
 धुधियांबी ए अखाँ नू लिख
 पर बिला जोंबी ए बर किबाड़,
 तेरे, राजा जी ! बर किबाड़,
 लोल अपने बंद किबाड़ ! ॥४॥

* * *

जिये ओ बर किबाड़ ?
 में ताँ मर गई साँ तेरे बजार
 तेरे बेलचे बर किबाड़,
 साचे मोहाँ बी हाय बुझाड़ ! ॥५॥

* * *

आकाशमें मेरे भाग्यरूपी मेघ छा गए हैं। धारों ओर अँधेरा बिर भाया है। आकाश पल्लवों की भीष भीषकर में ठोकरें खाती तेरे द्वारपर आ गई हूँ। राजाजी, किवाड़ खोलो ! ॥३॥

मेरे राजन ! झूटा-झाँदी हो रही है। पुरवाई चलने लगी है। आकाशमें बिजली चमक रही है। बादल गरज रहे हैं। उसकी चमक आँखोंको चकाचौंध करती हुई बन्द किवाड़ दिखा जाती है। राजाजी, तेरे किवाड़ बन्द हूँ। अपने बन्द किवाड़ खोलो ! ॥४॥

कहाँ है बन्द किवाड़ ? वर्षाकी धौछार खाकर तेरे बन्द किवाड़ देखकर, मैं तो तेरे द्वारपर ही मर गई थी। ॥५॥

इह तो मेरी है आपणी छत्र—
 कुल्फी करवाँ बी कानियाँ बी छत्र,
 बिछ बटे मे मेरे महाराज—
 राजा जी राजा महाराज !
 किज गए हो आ मेरी करवाँ बी छत्र ?
 किज गईं हों जा बेज बह किबाड़ ? ॥६॥

* * *

सँके सोली बे म बिचकार
 कीते राजे मे बुल्ल मोयाड़—
 " जिहूँ करवे मे मँगू प्यार
 " मोह जावे मे मेरे बवार
 ' किजें मिल गए मोहनी बीवार ।
 " पर करवा मे जिहूँ गू प्यार,
 " जाँवा भाव हों मोह नाँ बे बवार—
 " बवार मोहनी बा मेरा बवार । ॥७॥

यह तो मरी अपनी शोपड़ी है ! भीतर मरे महाशय राजाओंके राजा बैठे हैं। मेरी तिनकोंकी शोपड़ीमें कैसे पहुँच गए ? तेरे बन्ध किबाइ देखकर मैं कैसे आ गई ? ॥६॥

मेरे राजनने अपने होंठ खोले— ओ मुझे प्रेम करते हैं वही मरे द्वार पहुँचते हैं, ताकि उन्हें मेरा बीबार हो जाए। पर मैं जिन्हें प्रेम करता हूँ स्वयं उनका द्वारपर जाता हूँ। उनका द्वार, मेरा द्वार है। ॥७॥

२१ निकी गोद विध

अन्ध मूर बे तड़के

जहाँ लै रहो सी सबेर अंगड़ाईयां
 पतु फुटासे बी गोद विध,
 इक छिड़े गुलाब बी गोद विध
 तुसीं लोल रहे समो मेरे साईयां ।
 किन, हां किन ! आ गए सजो,
 मोस मिथी गोद विध ?
 मेरे ऐडे बडे विशाल साईयां ।

२१ छोटी गोदमें

माझ जब उपाकी गोदमें ज्योतिर्मय प्राप्त
 अँधकार ले रहा था, तब एक बिले हुए स्निग्ध
 गुराबकी गोदमें तुम खेच रहे थे । तुम इतने
 विशाल मेरे प्रियतम् ! कैसे ? हाँ, कैसे आ गए उस
 छोटी-सी गोदमें !

एर निली गोद बिच

अन्ध मूर बे तइके

जबों सै रही सी सबेर अंगड़ाईयां
 पट्ट फुटासे बी गोद बिच,
 इक किङ्गे गुलाब बी गोद बिच
 तुसी खेल रहे समो मेरे साईयां !
 किङ्ग, हूँ किङ्ग ! आ मय समरे,
 ओस निली गोद बिच ?
 मेरे ऐड वडे विश्वास साईयां !

९१ छोटी गोदमें

मात्र जब उपाकी गोदमें ज्योतिर्मय प्रात
 भोगवाई से रहा था सब एक खिले हुए स्निग्ध
 गुलाबकी गोदमें तुम खेल रहे थे । तुम इतने
 बिछास मेरे प्रियतम ! कैसे ? हाँ कैसे आ गए उस
 छोटी-सी गोदमें !

२२ मेरा संदेश

अवे काले कबूतर !
 'बीओ मायां नूँ' बीर ।
 आइए मेजिली कट
 ते बसिली नूँ बीर ।
 समाइएँ कोई संदेश
 जो बन्हावे में घोर ?
 नीली पानी ए गल,
 न चिट्टी संदेश ।
 अगे हैता जबास,
 हार होईयां बिलगीर ।
 हाँ, ये समझी हाँ बीर ।
 मयाइएँ न, सजा आईएँ संदेश । ॥१॥

मुड़िमा जाना तू बीर
 मेरे पीया रे बेग
 सजा, मेरा संबग । ॥२॥

चिट्टी बगुह दियां तेरे गल—
 "उदल उदलके नीर
 र्जण बन गए पुहार
 उदल उदलके नीर ॥" ॥३॥

२२ मेरा सन्देश

ओ काले कबूतर ! तेरा शुभागमन !! तू जाने कितनी मुश्किलों और मजिलों काँपकर आया है। क्या कोई धैर्य बँधानेवाला सन्देश साया है ? तरे गलेमें नीला छागा है पर न कोई पाती है और न सन्देश। पहछे ही मैं उदास थी, अब और भी अधीर हो गई हूँ। हाँ, अब समझ गई। कुछ लाया नहीं बल्कि सन्देश लेने आया है ॥१॥

मेरे प्रियके चेहरेको छीटकर जानेवाले ! मेरा सन्देश ले जा ॥२॥

तेरे गलेमें पाती बाँध बेसी हूँ—

'पानी छलका-छलकाकर ओछे पत्रवार बन गई है पानी छलका-छलकाकर ।' ॥३॥

२३ कित्थे हो ?

कित्थे हो ?

कोसे हो,

कूरे नहीं ?

कूरे हो पर कभी सब सुनोबी नहीं ॥१॥

कित्थे हो ?

कोसे हो,

बिसरे नहीं ?

बिसरे हो पर सूरत नय बसेबी नहीं ॥२॥

कित्थे हो ?

कोसे हो,

मिलने नहीं ?

मिलने हो पर तन मूँ बेह सपटोबी नहीं ॥३॥

कित्थे हो ? मरे सुहणे साईं ।

कोसे हो मेरे प्यारे साईं ।

हमी कोसे पर तड़प मिसन बी

समसेबियां

समसेबी नहीं ॥४॥

एक कहाँ हो ?

कहाँ हो ? समीप हो, बोलते क्यों नहीं ? बोलते हो पर कान
आवाज नहीं सुनते ॥१॥

कहाँ हो ? समीप हो दिखाई नहीं देते ? दिखाई देते हो पर
आँखोंमें धूल समाती नहीं है ॥२॥

कहाँ हो ? समीप हो, मिलते नहीं ? मिलते हो पर धरीरसे
देह लिपटती नहीं है ॥३॥

कहाँ हो, मेरे प्रियतम ! समीप हो मेरे प्रिय ! ! समीप हो, पर
मिलनेकी तक़्क़स सम्हाले नहीं सम्हाली ॥४॥

३४ मेरे चप्पे लग रहे हन

मेरे चप्पे लग रहे हन

पाणियाँ बी छाती से मेरी किस्ती तुरी जा रही है,
होले होले, सहजे सहजे, उमके डमके ।

दिन डल गया

चप्पे लग रहे हन, किस्ती दुरी जा रही ह ।
हाँ, किस्से कु ?

शामाँ पे गईयाँ, किस्ती बल रही है,

मेरे चप्पियाँ बे पाणो नास सपन बी आवाज
कह रही हैं—

बल बल बल बल ।

हनेरा हो गया ।

दूर दूर किन्ते किन्ते बीवे टिमकते हन ।

चप्पे लग रहे हन किन्ती बल रही है,
अबे बली जा रही है

बाता ! किस्से कु ?

तार चढ़ आए, पाणियाँ बिच उतर आए,

हुया डमक पई,

तारे पाणियाँ नास खेसते हन, मेरी किस्ती बी
बल तों बेपरबाह हन ।

मेरे चप्पे लग रहे हन, किन्ती बल रही है

बाता ! किस्से कु ?

॥ मेरे चप्पू लग रहे हैं

मेरे चप्पू* लग रहे हैं। पानीकी छाती पर मेरी नाव धीरे धीरे मन्दर गतिसे बहती हुई चली जा रही है।

दिन डल गया। चप्पू लग रहे हैं नाव चली जा रही है। हाँ कहाँ पर? सन्ध्या डल गई, नाव चल रही है। मेरे चप्पू पानीकी छातीके सग छ्यकर आवाज देते हैं—चल, चल, चल, चल। अन्धकार घिर आया है।

दूर कहीं दीपक टिमटिमाते हैं। चप्पू लग रहे हैं। नाव चल रही है अभी चली जा रही है। प्रियतम कहाँ?

तारे निबल आए। पानीमें उतर आए। वायु चलने लगी है। तारे पानीके सग खेसत हैं। मेरी नावकी आलसे सेपरवाह हैं। मेरे चप्पू लग रहे हैं। नाव चल रही है। प्रियतम कहाँ?

* चप्पू—नाव का वह बौड़ जो पतवारका भी काम देता है।

२४ मेरे चप्ये लग रहे हन

मेरे चप्ये लग रहे हन

पाणियां बी छाती से मेरी किस्ती दुरी जा रही है,
हौले हौले, सहजे सहजे, जमके जमके ।

बिन बस गया

चप्ये लग रहे हन, किस्ती दुरी जा रही है ।
हाँ, किये कु ?

शामां दी गईयां, किस्ती बस रही है,
मेरे चप्यियां बे पाणी नास लगन बी आवाज
कह रही है—
बस बस बस बस ।

हनेरा हो गया ।

दूर दूर किते किते बीबे टिमकते हन ।
चप्ये लग रहे हन किस्ती बस रही है,
अजे बली जा रही है
बाता ! किये कु ?

तार धड़ आए, पाणियां बिध उतर आए,
हुवा हमक परी,
तारे पाणियां नास खेसदे हन, मेरी किस्ती बी
बास तों बेपरवाह हन ।
मेरे चप्ये लग रहे हन किस्ती बस रही है,
बाता ! किये कु ?

२४ मेरे चप्पू लग रहे हैं

मेरे चप्पू* लग रहे हैं। पानीकी छाती पर मेरी नाव धीरे धीरे
थर गतिसे बहती हुई चली जा रही है।

दिन ढल गया। चप्पू लग रहे हैं, नाव चली जा रही है। हाँ
कहाँ पर? सन्ध्या ढल गई, नाव चल रही है। मेरे चप्पू पानीकी छातीके
उग लगकर आवाज देते हैं—चल, चल चल चल। अघकार घिर
पाया है।

दूर वहीं दीपक टिमटिमाते हैं। चप्पू लग रहे हैं। नाव चल
रही है अभी चली जा रही है। प्रियतम कहाँ?

छार निकल आए। पानीमें उतर आए। बायु धरने लगी है।
छार पानीके सग खसते हैं। मेरी नावकी चाससे खपरबाह हैं। मेरे
चप्पू लग रहे हैं। नाव चल रही है। प्रियतम कहाँ?

* चप्पू—नावरा वह डीढ़ जो पलवारवा भी काम देता है।

चर नहीं, सूरज नहीं, मेरी बेड़ी बिच बीबा नहीं ।
 पाणीयाँ बी छाती से कोई राह सड़क पगडण्डी
 नहीं,
 मेरे निताणे खप्प हम ।
 पापी बेड़ी तिसकाई जाँवा है,

प्यों क्यों किलती ठुरबी है,
 टिमकने घामने डूर हो डूर जापवे हन ।
 पापी ठडे हन, महरबार हन, हवा जिली है,
 जफियाँ पीडी है, पर हुष ठरब हन,
 बाता ! अजे बिरये कु ?

रात बिसक पई तारे लटक गए,
 बड़ी तिसफदी जा रही है
 पाणी खप्पियाँ बा मूँह चुमब हन, ते आपवे हन,
 चल, चल, चल ।
 बस्त बाता ! बिरये कु ?

बाद नहीं, सूख नहीं । मेरी नाभमें दीपक भी नहीं है । पानीकी छातीपर कोई रास्ता सड़क पगडण्डी नहीं है । मर चप्पू बमबोर है । पानी नावको फिसलाए जा रहा है ।

जैसे-जैसे माव चसती है टिमटिमाता आसोक दूर ही दूर सगता है । बर खाता हुआ पानी घीतर है । बायु तीखी है, लिपटती जा रही है । अब हाथ ठिठुरते हैं । प्रियतम, अभी कहाँ ?

रात ढल गई । तारे सटक गए । नाव फिसलती जा रही है । पानी चप्पूओंका चुम्बन लेता हुआ कहता है—चल चल चल चल । घटा ता प्रियतम कहाँ ?

९५. गंगाराम

बिच जगल इक उभाड़ बढ़ी,
इक तोता बठा रोंबा है ।
उर जठबा, तकबा टपबा है,
तक तक के फाम्हा हुवा है ॥१॥

आ सहिम कर छहि बीबां है,
बल आस बदे तुर पैदा है ।
बक टग कदे अल मोटे है,
पक लाम्य कदे फड़कबा है ॥२॥

इऊँ डावां डोलक हुवे नूँ,
भुल ग्रह ने नास सताया है ।
पर बुल हरता इस बुसिये बा,
कई सेण सार ना आया है ॥३॥

सी पिपल इक उबार बढ़ा,
जुग बूर सुहाबा लहर रिहा ।
इक डार उबड़ी तोतिपां बी,
इस ते आ बठ अराम लिया ॥४॥

झुम झुमण डाल हिलबोपां ते,
टुक गोस्हां पाणा अचिम्त बणे,
पुग हो हो छहि छहि दोर करण,
फिर बार बुफेरे मजर सड़े ॥५॥

२५. गंगाराम*

वियावाम जगलमें बैठा एक छात्र रो रहा है। भयसे वह
बौंक उठता है। उछलता है। दधर-दधर दल-देखकर बचन
होता है ॥१॥

ठिठुरता-सिडुड़ता कभी बैठ जाता है। कभी आशाका पल्ला
पकड़े चलता है। टांग उठाकर कभी आँख मीन करता है और पककर
कभी पख फड़फड़ाता है ॥२॥

ऐसी धबकाहटमें भूख-प्यास सताने लगती है किन्तु इस दुःखीका
दुःख मिटानेवाला कोई नहीं आया ॥३॥

एक विशाल पीपलका पड़ कुछ हा दूरीपर खड़ा सहसा रहा
था। उड़ान भरती तारोंकी एक पंक्ति उसपर विधाम बनकर लिए
आकर बैठ गई ॥४॥

यपरवाह तोत जल पिप्पला (पीपलके फल) ग्रास है ता देखकी डाल
मम मूम जाती है। यह बहाल प्रार करत वे चारों ओर निगाह दोड़ान है ॥५॥

*पासू होनेको संग्राम या मियाँ मियाँ कहा जाता है। भारी बीर्यवाने
एक वज्रियमें एक पराधीन तातेके बाध्यमये स्वाधीनताकी महिमा गाई है।

इक तोते छिठा झूर धड़ी,
कुई धोर असादा विलस रिहा ।
बिच कुल तसीहे पिया किसे,
सम्भ हृदियां ते हूँ डिसक रिहा ॥६॥

इह मार उडारी पास गया
आ कहिंवा तूँ क्यों सिसक रिहा ?
ह बुसिया क्यों बुजियार बड़ा
बिच सहिम उदासी मुसक रिहा ? ॥७॥

आ मार उडारी माल मेरे,
लै चलाई उपर धुल यड़े ।
मत ऐषों बिस्नी कुसा आ,
निज पेट भरन नूँ बक सड़े ॥८॥

मुन तक कह बल बूझ जरा
'को में जा जये सकवा हूँ ?'
कुई बुकन वाला माल नहीं
म सोब सोबनो सकवा हूँ ।' ॥९॥

'साह, तोता कहिंवा सिङ्क जरा,
'तुँ उड़ परी नूँ मार मरा ।'
पर मारे पर उड़ सवे ना,
हो गगाराम सचार रिहा ॥१०॥

ए हाल भयोला तोते ने
महीं भगे मुगिया छिठा सी,
उड़ गया भरापा बसण नूँ
इह भवा मुभाबल छिटठा सी ॥११॥

एक तोतेने देखा कुछ दूरीपर उनका कोई भाई बिम्बन
रहा है । किसी मश्रूणा पीटामें जकड़ा पत्र होते हुए भी पत्र विहीन
लग रहा है ॥६॥

सोना एक उद्यान भरकर उसके पास जाकर बोला— तू क्यों
सुबक रहा है ? इतना दुखी क्यों है ? उदासी और भयसे कैसे काँप
रहा है ? ॥७॥

बस मरे माय उड़ चला । मैं तुम्हें उस पड़क ऊपर ले चलूँगा ।
कहीं ऐसा न हो कि यहाँसे कोई बिम्बनी-कुत्ता अपनी उत्तर-प्राप्तिके लिए
तुम्हें उठा ले जाए । ॥८॥

अनासक्त तानने उस पेड़की ओर देखकर कहा— क्या न वहाँ
जा सकता हूँ ? कोई उठानेवाला माय नहीं है । यही सोचकर हिचकिचा
आता हूँ ॥९॥

तोतेने डाँटकर कहा— छि तू पत्र तो मार । ” पत्र
छड़पड़ाने पर भी गंगागम उड़ न सका । लाचार होकर बैठ
गया ॥१०॥

एमी अनोमी बात तोतेन न पहल मुनी थी और न दगो
थी । वह अपन मायियोंको यह मञ्जार बिम्बा ज्ञानके लिए पेड़पर
गया ॥११॥

इक सोते छिठा दूर बड़ी,
कुई धीर असाधा बिसस रह्या ।
विष बुझ तसीह पिया किते,
सम्भ दुबिया ते हे विलक रह्या ॥६॥

इह मार उबारी पास गया
जा कहिबा तूं क्यों सिसक रह्या ?
हे बुझिया क्यों बुझियार बह्या
विष सहित जबासी बुझक रह्या ? ॥७॥

आ मार उबारी पास मेरे,
ले धनी उपर मुख बड़े ।
मत ऐधों बिस्ती कुत्ता आ,
निज पट भरन नूं चक बड़े ॥८॥

मुण तक कहे बल बूझ जरा
'की म जा उये सकदा ही ?
कुई बुझा वाता नास नहीं
मेँ सोच सोचणो सकदा ही । ॥९॥

'दिह, तोता कहिबा मिड़क जरा,
'तूं उड़ परी नूं मार भरा ।
पर भारे पर उड़ सवे भा,
हो मंगाराम लभार रह्या ॥१०॥

ए हास अणोजा सोते ने
महों अगे मुणिया छिठा सी,
उड गया धरावा बसण नूं
इह नया मुआस छिटा सी ॥११॥

एक तोतन देना कुछ दूरीपर उनका कोई भाई बिलस रहा है। किसी यन्त्रणा पीड़ामें जकड़ा पख होते हुए भी पख विहीन लम रहा है ॥६॥

तोना एक उड़ान भरकर उसके पास जाकर बोला— तू क्यों सुदक रहा है ? इतना दुखी क्यों है ? उदासी और भयसे कैसे काँप रहा है ? ॥७॥

बल मेरे साथ उड़ चल । मैं तुम्हें उस पेड़के ऊपर ले चलूँगा । वहीं ऐसा न हो कि यहाँसे कोई बिस्ली-बुत्ता अपनी उदर-पूरतके लिए तुम्हें उठा ले जाए । ॥८॥

अचान्त तोतेने उस पेड़की ओर देखकर कहा— क्या मैं वहाँ जा सकता हूँ ? कोई उठानेवाला साम नहीं है । यही सोचकर हिचकिचा जाता हूँ ॥९॥

तोतेने डाँटकर कहा— ‘छि तू पल तो मार !’ पंख फड़फड़ाने पर भी गंगाराम उड़ न सका । लाचार होकर बैठ गया ॥१०॥

एसी अनोखी बात तोतने न पहले सुनी थी और न देखी थी । वह अपन सारियोंको यह मजेदार किस्सा बतानके लिए पेड़पर गया ॥११॥

जो सारा हास मुनाया सु,
मुन बार हिठाही आई गई ।
तब सब ने आसिया तोता हूँ ?'
'की सिर इस आय बसाय गई ? ॥१२॥

इक कहिबा साविया बे ।
'तू क्यों ए घाल बगाई ए ?
'विष सहिम घुटिया बबक रिहा
'क्यों उडण बाण मुलाई है ? ॥१३॥

रो कहिबा गगा राम 'बई ।
'म वतनों बिछुड़ बेहास बड़ा,
'मुन मेह ने मार मुकाया ही
'हुस सहिम पिया सिर आण कड़ा । ॥१४॥

इक तोता कहिबा 'बस बई ।
'कुन हाल वतन बा अपने नूँ ?
'विष बिरहों जिस बे रोंबा हूँ ?
'विष पहुँचण चाहें जिसबे तू । ॥१५॥

मुन आले गगाराम 'मुनो ।
म बब-सोर दा दासी ही ।
मुन भोज बहारा भोग बढ़े,
बिन रात रहा विष हासी ता । ॥१६॥

इक सोते टुकी बात नहे
'इस या त रहना ठीक नहीं,
उड पलो उताही पिपल ले
गल बाही उधे चल सही ।' ॥१७॥

उसने आकर सारी बात बताई । सुनकर तोतोंकी बत्तार पेड़से नीचे उतर आई । सबने देखकर कहा— है तो ताता इसके सिरपर क्या बसा था पत्नी है ? ॥१२॥

एक बोला—“सुन ओ भाई ! मुने अपना यह क्या हाल बना रखा है । भयभीत-सा क्यों दुबका जा रहा है । उड़नेकी रीति तू क्यों भूल गया ” ॥१३॥

गगाराम रोकर कहने लगा— अपने देखते बिछुड़कर मैं बहुत बहाल हूँ । भूल-प्यासमें मुझे निहाल बना दिया है । दुःख और भयसे मरा जा रहा हूँ । ॥१४॥

एक तोता बोला—“हो भाई ! तू अपने देखका कुछ हाल तो कह ? तू कहाँ पहुँचना चाहता है और किसके बिछाहमें रो रहा है ? ॥१५॥

सुनकर गगाराम बोला— सुनो मैं दब-साबका बासी हूँ । रात-दिन मौज थहागकी मुनियामें विचरता था ॥१६॥

एक तोतेने बीचमें ही बात टाफ दी आकर कहा— यह स्थान ठीक नहीं है । उड़कर ऊपर पीपलपर बल बैठें । वही चत्कर बातें करेंगे । ॥१७॥

पर जालम मुखा पेट घुरा
बिन झुलके करे अराम नहीं ।
सी रोंबे घोंबे गगु मे कर
उगल निगल सा गोहल सई ॥२४॥

हुण पुण्डण हास विलापत बा
जह गगु माल स्वाद बहे —
“मे बेवतिपां विष बसबांसां
मित्ये जीवन सदा अधिम्ल रहे ।
मे बसणे नूं इक महल [सिगा,
जो लोहे माल बणाया सी ।
इस अन्दर बंठया निर्भय सां,
हुई वीरो निकट न आया सी ।
हुई भद्र न इस नूं सकबा सी,
फिर पोष अजायब बगबी सी ।
ते खूरी मिटठी मिलबी सी,
जो यहुत स्याबी लगबी सी ।
कई मेये मिरचां मिसवे सम
कई भोजन सोहणे आबे सी ।
कई प्यार लाइ नित हुंवे सी,
कई सोफो ीत सुपावे सी ।
दिन रात मीज ही रहिबो सी
हुई मुगबल बरे मा पबी सी ।
महो जिनता यात्रे रहिबो सी
म सोइ जहमा तिर बहबी सी” ॥२५॥

किन्तु आसिम भूखा पेट बुरा है। इसे बिना फुलवा
 दिए आराम कहाँ है। सो रो-घाबर गगू पिप्पली निगल ही
 गया ॥२४॥

अब बिसायतका हाल पूछनेपर गगू चम्पे के साथ कहन
 लगा—'देवताओंमें मरा बसरा था, वहाँ जीवन चिन्ताओंसे मुक्त
 रहता है। मेरे निवासक लिए एक महल था जो लोहेसे बना था।
 उसके अन्दर मैं निर्भीक बैठा रहता था। न कोई शत्रु समीप आ सकता था
 और न कोई उसे साङ्ग सकता था। फिर बायु भी अजीब लगती थी
 और बहुत स्वादिष्ट मीठा मलीदा मिलता था कई प्रकार
 फल भी मिलते थे। कितने प्रकारक सुन्दर मोजन आत थे। नित्य
 साङ्ग प्यार मिलता था। लोग गात सुनाते थे। रात-दिन मोज थी।
 कभी कोई कठिनाई उपस्थित नहीं होती थी और किसी चिन्ताने भी कभी
 नहीं सताया था" ॥२५॥

इह कहरे गंगा राम तुरी,
 'सट पछी पट पट पड़वे सी ।
 'सा तूरी' मुड़ मुड़ कहरे सी,
 'कई टपे पावों जड़वे सी ॥२६॥

इह भयानक बोली बहिस परी,
 पुण कम्बी सारी डार बड़ा ।
 कुल समझ सके ना की होपा,
 इह बी-यफवा है सबज बिड़ा ॥२७॥

जब थुप होई तब सोच पई,
 सब पिमर दुकावे पके ने ।
 महीं समझ पिया जो उस रिहा,
 फिर पुछा पुछ पुछ अरे ने ।
 कुल सिपाणे तोते उड गये,
 इक सिमल बा सो यूछ बड़ा ।
 इक घटूत पुराण तोते बा,
 रोह इस बी बिच सी इक पुरा ।
 जा सबने सोस निवाया ए,
 ते सारा हाल मुणाया ए ।
 किर पुदिपा—'वाबा बस असा

यह कहकर गंगाराम छूट पंछी पट पट' * रटने लगता था ।
बार-बार कहता था— 'छा मसीवा' और कई टोटके सुनाने लग
जाता था ॥२६॥

यह भयकर बोली सुनकर सभी तोतोंको जैपजैपी छूट गई ।
उमड़ी समझमें कुछ भी नहीं आया कि हरा तोता क्या बन
रहा है ? ॥२७॥

प्रामोदी छा जानेंपर साबत बिता करते सब धन गए ।
उसने जो कुछ कहा किसीकी समझमें नहीं आया । फिर जब पूछ-पूछकर
जग गए, तो कुछ समझदार ताते उड़ गए । सेमरुवा एक बहुत
बड़ा पेड़ था । उसमें एक बूढ़े तोतेने अपना बाटर बना रखा था ।
सब जानकर नतमस्तक हुए और सारी बानें धताकर पूछा— 'हमें
यता बावा कुछ तरी समझमें आया ह ।" ॥२८॥

* पित्रेमें मंगारामजी शब्द पड़ने लगे सिगाया जाता है—

"बटपट पीछी बनुर मुजान । सबवा दावा थी भयमान । पड़ गंगाराम ।"

उस बुढ़े कई जमाने बर्ते,
 बुनियाँ बे बिच बिछटे से ।
 कई हास मुने से पुछे से,
 कई बाबे पिछले छिछटे से ॥
 'हूँ कहिबा सोइँ निकसया सी,
 ते उड पिपले आइया सी ।
 तक उपरे आये तोते भूँ
 एक कूपा ध्यान जमाया सी ॥
 मत ताड गया रंग पिस्का हूँ,
 ते हिस्मण जुस्तन ठिस्मा है ।
 मल बबक बबक के तकबा है,
 जियों सिर ते हर बम बिस्मा है ॥
 कुल ठिलके मत्थे जोत नहीं,
 बिच जम्बा लिखबी ताण नहीं ।
 निज ताकत बी कुई ज्ञान नहीं,
 कल कड़बी बी कुई ज्ञान नहीं ॥२९॥

उस बाबे बुढ़े तक पिया,
 है बब पिया या बारा रिहा ।
 नहीं बेव-लोक बे पास गिया,
 सँ ऐये जमे सास रिहा ।
 फिर माल पियार बे मोल पिया,
 'हस यबधू सरपुरवार बड़े !
 'त बेव-लोक तो बिसुड कर्हो,
 'बे लीते सिर ते कुल कड़े ? ॥३०॥

उस बूढ़ेने जमानेके सारे उतार चढ़ाव देखे थे । सारी दुनियाँ छान रखी थी । 'हूँ' कहकर वह अपनी खोहसे निकला और उड़कर पीपलके पेड़पर आ गया । उस पराये-से लगनेवाले तोतेपर एक गहरी दृष्टि डालकर वह उसी समय भाप गया—रग पीटा है । अंगोंमें झीलापन आ गया है । आँखोंमें भय-सा समाया हुआ है, जैसे सिरपर कोई विस्ली हो । होंठ कुसक गए हैं । माथा ज्योतिहीन है । डीनोंमें कोई तनाव नहीं । स्वयंकी भक्तिमें न तो विश्वास है न कोई स्वाभिमानका चिह्न छेप है ॥२९॥

उस बूढ़े तोतेको सन्देह हुआ—या तो यह बन्दी रहा है या दास बेब-सोकका बासी नहीं है । इसकी साँस तो देखो कैसी पूस रही है । फिर विनम्रतासे उसने पूछा—'प्रिय ! बता तो तूने बेब-सोक्स बिछुड़कर ये मुसीबतें कबसे मोल ले ली ?' ॥३०॥

रो गँगू माखे 'सीर करम
 दुर बेब-बास अज माये सी,
 चुक गँगू माल सिपाये सी,
 फिर लोडीं सब कुभाये सी ।
 उह खेड सिडंबे पुहल भरे,
 ते टपरे मचवे बौड रहे,
 छड मरू किदरे निकल गये,
 भुड उस चाहें नहीं परत सहे ॥३१॥

'उह गये किसे बल होरत नू,
 पट पट के अँलीं बेहवां सी,
 फिर दुर दुर यां यां सबबा सी,
 में हारिया भाल करेबां सी । ॥३२॥

॥ -बुहा कहिहा- दस बई !
 तूं बेब-लोक नू जाणा ह ?
 कि रहवे जगल बांग मसा
 बम बन बा मेबा जाणा ह ? ॥३३॥

हई, बेब-लोक नू जाणा ह ।'
 कहे गंगू राह बसाइया जे
 इस, बायां डोल बिसायत लो
 म बेदा बिसे अपड़ाया जे । ॥३४॥

की जे मिसबा लोपा ह ?
 की फल बराम बा सोमा ह ?
 की जे स्वादल पीण बहे
 की बसबी गंगा सोमा ह ? ॥३५॥

गंगाराम रोकर कहने लगा—‘आज बच्च सैर करनेके लिए आए, तो मुझे भी उठाकर साथ सत आए। वे सब खसमें लीन हो गए। खेपते-खेपते वे जाने मुझे छोड़कर किछर निकल गए। फिर उस जगह स्पीटकर नहीं आए ॥३१॥

वे किसी दूसरी ओर निकल गए। मैं आँखें काढ़ काढ़कर इधर-उधर उन्हें देखता रहा। ॥३२॥

हैं —बूढ़े सातेन फिर कहा—‘तू हमें बता देव-सोकको जानकी इच्छा है या जंगलमें हमारी भाँति रहकर भाँति भाँतिके फल खाकर जीना चाहता है ? ॥३३॥

गंगाराम बोला—‘मैं देव-सोकको जाऊँगा। मुझ रास्ता बता दो। इस अस्थिर बिसायतस मुझ मरे दण पहुँचा दा। ॥३४॥

‘वहाँ क्या गरीबा गोसा मिलता है ? क्या वहाँ बादामके फसबा स्रोत बहता है ? वहाँ क्या भीमी बापु बहती है या गंगा-गोमती बहती है ? ’ ॥३५॥

इह कहके बुड़े तोते ने
छोफेरे मजर बुझाई सी,
घल डार आपणी 'ध्यान करो'
इक ऐस अस्त तकाई सी ॥३६॥

सुष गैपू कंहिंदा आलां की'
हुज घोस्निया किहा ना जाई ए,
रस आबे बेसिये मसीं जे,
बिन डिट्ठे समस्त ना आई ए ॥३७॥

जस बुड़े तोते 'ठीक' किहा ।
नहीं डिट्ठे वरणा सुनिया हो,
जो हड्डी भाके वरसिया ना
की नास सियालां पुनिया हो
पर तर जो सोय बड़ी दी है
इक सच झूठ वा तस्कड ह
कर बसबी निगय सुनिया बे
की सच जचे की जकड है ?
मे पुछीं जो हुज मियारे जी ।
बे उत्तर असां मिहास करो
इस जगल वासी पगुआं नू
हुस मस बिभी लुहाहास करो ॥३८॥

जो मंदर सुन्दर मिसिया सी
बिच जिसदे सुनिये बसदे से
की वन्द चुतरऊ होया सी
या जस नू इक दो रसते से ? ॥३९॥

यह कहकर यूँ तोतेने अपने चारों ओर निगाह दी।
तोतोंकी कतारकी ओर सचेत किया कि जरा ध्यान करो ॥३६॥

गंगाधर बोला—‘क्या कहें । कहने सुननेकी बात नहीं ।
अपनी आँखों देखकर ही पता चलता है । बिना देखे कुछ समझमें नहीं
आता । ॥३७॥

बूढ़ा तोता बोला—‘ठीक है दसने-सुननेमें अन्तर है । जो
अपने साथ नहीं बीती, सुनी बातका क्या मूल्य है ? फिर भी
सोच-विचार बड़ी चीज है । एक सच-मूठका तराजू भी है जो सुनी
बातका निर्णय देनेकी क्षमता रखता है । मैं जो कुछ पूछूँ उसका उत्तर
देकर निहास करना । हम जंगलके जीव कुछ शिक्षा ग्रहण
करेंगे ।’ ॥३८॥

‘हाँ, तो जो निवासके लिए मन्दिर मिला था और जिसमें रहकर
तुम सुखी थे—इया वह चारों तरफसे बन्द था या उसके दो रास्ते
थे ? ’ ॥३९॥

इह कहके मुझे तोले ने,
 चोफेरे गजर बुझाई सी,
 बस डार आपणी 'ध्याण करो'
 इक ऐस भक्त तकाई सी ॥३६॥

मुण गेनू कहिवा 'आस्ता की'
 कुज बोलिया बिहा ना जाँदा ए,
 रस आवे बेसिये असी जे,
 बिन डिटठे समझ ना जाँदा ए ॥३७॥

उस मुझे तोले 'ठीक बिहा ।
 नहीं डिटठे बरणा मुणिया हो,
 जो हूँ आके बरतिया ना
 की नाक लियेसी मुणिया हो
 पर सब वो सोच कड़ी हो है
 इक सब झूठ बा तक्कड़ है
 कर बसबो निगम मुणियां बे,
 की सब जले की जक्कड़ है ?
 म पुछां जो कुज पिघारे जी !
 बे उत्तर असी निहाल करो
 इस जगल बासी पगुआं मुं
 कुस भक्त दिओ खुदाहाल करो ॥३८॥

जो मंजर मुन्जर मिलिया सी
 बिच जिसदे मुकिये बसदे से
 की सम्य बुतरजे होया सी
 या उस मू इक दो रसते मे ? ---

यह कहकर बूढ़े तोतेने अपने चारों ओर निगाह दौड़ाई ।
तोतेकी कठारकी ओर संकेत किया कि जरा ध्यान करो ॥३६॥

मगाराम बोला— क्या कहें । कहने-सुननेकी बात नहीं ।
अपनी आँखों देखकर ही पता चलता है । बिना देख, कुछ समझमें नहीं
आता । ॥३७॥

बूढ़ा तोता बोला— 'ठीक है दसने-सुननेमें अन्तर है । जो
अपने साथ नहीं बीती सुनी बातका क्या मूल्य है ? फिर भी
सोच-विचार बड़ी चीज है । एक सच-मूठका तराजू भी है जो सुनी
बातका निर्णय देनेकी क्षमता रखता है । मैं जो कुछ पूछूँ उसका उत्तर
देकर निहाल करना । हम जंगलके बीच कुछ सिसा ग्रहण
करेंगे । ॥३८॥

'हाँ, तो जो निवासके लिए मन्दिर मिला या और जितमें रहकर
तुम सुखी थे—इया वह चारों तरफसे बन्द था या उसके दो रास्ते
थे ? ' ॥३९॥

गँगू— इक रसता जमबा हैगा सी,
पर बन्ध सदा उह रैबां सी ।
मत कोई मर्नू का धाबे,
इस गल तों सुलिया सेबां सी ।
सन रसते चार चुफेरे जी,
धुप पीप खुसी आ जाँखी सी ।
हर मेनू रता मा रैबां सी,
हुई आन बला न काँखी सी ॥४०॥

बुढ़ा तोता—पर बसीं ताकी मधर बी
बस किस बे लोखन मारण सी ?
जे बस ना तेरे रखी सी
तां इस बा कहू की कारण सी ?
जे जिड़ड़ा चाहे निबलण मुं
कोई तेरी आखी मनबा सी ?
जां बसा मरजी डुये सी
तू बिच पिया सिर धुमबा सी ?
जो तूं बरबाबे बसबा हें
की उस तों बाहर आबा स ?
जां बिचे रहके उहना तों
बर्नन ही बैबा — स्मदा सें ? ॥४१॥

गगाराम—सी बेबतिपां बे बस सदा,
वस मेरे रसत माझा सी ।
उह बन्दी ना, इक राखी बा,
म हासे तनबा बाढा सी ।
उह रसते भोज बहारां बे
बा चागण रबाबा बैबे सन ।
पर मर्नू भन्वरे रसबे सन,
उह बसते रण करेबे सन ॥४२॥

गंगाराम—उसका एक ही रास्ता था जो हमेशा बन्द रहता था। मुझे कोई खा न जाए, इस बातसे निश्चिन्त होकर मैं सोता था। रास्ते तो चारों तरफ और भी थे। खुली धूप आती थी। मुझे किसी प्रकारका भय नहीं रहता था। न कोई बला ही मुझे पकड़ सकती थी ॥४०॥

-

बूढ़ा तोता—यह तो बता मन्दिरकी लिङ्गकी खोलने और बन्द करनेका अधिकार किसके पास था ? तेरे बच्ची अगर बात नहीं थी तो इसका क्या कारण था ? यदि तरा दिस बाहर निकलनेको चाहता था तो क्या तेरी बात कोई मानता था ? या फिर तू परियोंक आधीम सिर खुजलाता ही रह जाता था ? जो द्वार तूने बताया क्या उनमेंसे कभी बाहर भी आता था, या भीतर रहकर ही दर्शन देता-लेता था ? ॥४१॥

गंगाराम—सब कुछ दयतामोंके बगमें था। मेरे बच्ची कोई बात नहीं थी। मेरे गिर्दे एक तगड़ा बाबा था। वे मीन-बहारने रास्ते बायु प्रमाण और आनन्द दते थे। पर मुझे भीतर ही रहना प। मेरे मासिक मेरी रखा करते थे। ॥४२॥

बुढ़ा तोता—जो अमृत खाये मिसरे से
उह बेंबे तैरूं आपे सी
या मुंह मंगिया वो बेंबे सी
जो तैरूं लगवे मापे सी ॥४३॥

गगाराम—जो भावे उहना मां पिया नूं
निज बालां बांगू बेंबे सी
मे मंगय कोसों संगवां सां
जो चछुज आप करेवे सी ॥४४॥

बुढ़ा तोता—जे बाल कहे कोई उम्हीं बा
त नास सेंडवा हसवा सी,
ते तैचों चक बडीबां सी
उह जा मां पिया नूं बसवा सी ।
तब तनूं सोटी पंदी सी
ते चूरो बन्द रहीं सी ?
जा गल न गउली जांरी सी
कुई माफ़त सिरें न आंवी सी ? ॥४५॥

गगाराम—जे मं अपराध कमावां सां
तब कीते बा फल पांवा सी ।
पर म बोवा बग रहिवां सां,
बस लगवे नहीं बुलावां सां ।
इह कहिवां सटपट पछो बो,
फिर गगू बोसो पांवा ए ।
मुग तोता धीज पठावा ए,
ते अगली गल चतावा ए ॥४६॥

बूढ़ा तोता—ओ अमृत-रूपी भोजन तुझे मिलते थे, क्या वे स्वयं देते थे, या माँगनेपर मिलते थे ? ओ तूरे माँ-बापके समान थे । ॥४३॥

गंगाराम—उन माँ-बापकी ओ इच्छा होती थी, अपने बालकोंकी भाँति मुझे खानेको मिल जाता था । माँगनेसे मैं सज्जाता था ओ दत्ता होता वे स्वयं ही दे देते थे । ॥४४॥

बूढ़ा तोता—यदि अपन सग लेसते उनके किसी बालकके तू काट बैठता था और वह जाकर माँ-बापका बता दता था, तो तुझे पीटा जाता और मर्जीदा बन्द कर दिया जाता था ? या फिर बात टाल दी जाती थी । और तूरे सिर कोई मुसीबत नहीं आती थी ? ॥४५॥

गंगाराम—यदि मैं अपराध कर बैठता था तो उस क्रियेका फल भी मिल जाता था । पर मेरा जहाँ तक बन्ध चलता मैं किसीका दिस नहीं दुखाता था । यह कहकर गंगाराम रुग्णपट पंछी की बोली घोसने रुग जाता है । सुनकर तोता गर्दन लड़ी कर सेता है और बात आगे बढ़ाता है । ॥४६॥

बुढ़ा तोता—इह बोली मिस विष बोले तू
 इह बेव लोक बी वाणी है ?
 को रमस बी बसी तैर्नू हे
 या कठ करन बी ठाणी ते ?
 जे समसे तां समसावों तू
 की इस बा सिट्टा जाता ऐ ?
 बी येत समस तू सीते हन
 की विलो वध पछाता ए ? ॥४७॥

तंगाराम—म समस नहीं जे की बोली,
 जो बोसण सोई मकस करी ।
 उह रीसण एम्हा मकसी ते,
 म जुगी करन बी मकस करी ॥४८॥

इह मुणके तोता हस पिपा,
 तिर फेर बार नू बंहिबा है ।
 'कुस सममिया बरबुरबारो जे,
 किस भां ए पिपारा रहिबा ह ?
 नहीं बेव—लोक बा वासी है,
 नहीं बेबा रसते पाया है ।
 उस मानुष टुरबे घरतो जे,
 बिष बन्बी बर रसाया है ।' ॥४९॥

बूढ़ा तोता—ओ बोली अब तू बोल रहा है क्या यह देव-सोककी वाणी है ? इसका कोई रहस्य—तुम्हें बताया गया है या रटी-रटाई है ? यदि तू समझता है तो हमें भी बता कि इसका क्या अर्थ हुआ ? क्या सब रहस्य तुने जान लिये हैं, और जिसकी पहचान करती थी, कर चुका है ? ॥४७॥

गगाराम—मूल स्वयं की पता नहीं कि मैं क्या बोलता हूँ । ओ बे बोझों है, उसकी नकल करना मुझे जाता है । वे मेरी नकलपर प्रसन्न होत हैं । मेरा काम उन्हें प्रसन्न रखना है ॥४८॥

यह सुनकर बूढ़ा तोता हँस दिया । फिर तोतोंकी बतारको सम्बोधित करते हुए कहने लगा—कुछ समयमें आया फिरजीवियो ! यह अपना भाई कहाँ रहता है ? यह किसी देव-सोकका बासी नहीं । न यह देवताओंके मार्गका ही अनुयायी है । यह तो घग्गीके अनुष्यों द्वारा बन्दी बनाकर रखा गया एक तोता है ! ॥४९॥

हो अघरज सारे तरवक गये,
 पये बिट बिट सारे तकवे हूँ ।
 वस बाबे मुझ बेहरे हूँ,
 वस गगु तकवे जकवे हूँ ।
 पा गँगू घूरी बेहरे हूँ,
 फिर हेठा मजर बुझावे हूँ ।
 मत किहरे झूठ करेबा जे
 कोई बतनी कुरिया आवे हूँ ।
 हुण बुझे सोते आह भरी,
 फिर नन अकाग जठावा हूँ ।
 जो असी बदे ना रोंबी सो
 बो हँमू भरके लावा हूँ ।
 ना रमये जम्मे नैन सबे,
 छ जवे रसीसे रग मरे ।
 बिज गड मवासा अबब मरे,
 जह माता ऐं अरबास बरे ॥५०॥

हे सब तौ जखे उहुण वासे,
 भरदाँ तो भी परे परे ।
 जखे बसे बिना मासणे,
 बिज सम्याँ तर गगन रहे ।
 पीण अकाग, घरती तलियाणी
 हर पाँ तो बिस-धीड़ मुजो,
 मुण अरबास पगु बी बाते ।

आश्चर्य-चकित हो सभी चौंके । एक दूसरेकी ओर देखने लगे । कभी बूढ़े सोतेको, कभी गगारामको देखते हुए झेंपते हैं । गंगू माथेपर सेवर बासकर हथर-उधर निगाह दौड़ाता है कि कहीं उसकी खोज-सवर खेनेबाणा कोई देख-बासी घसा आ रहा, दिखाई पड़ जाए । अब बूढ़ा ठोठा एक नि-वास लफर अपनी आँखें आकाशकी ओर उठाता है । जो आँखें कभी रोई नहीं थीं उममेसे आँसुओंकी दो धूँदें बलक पड़ती हैं । वे रसिया आँखें एकटक आकाशकी ओर सगी प्रार्थनामें जुड़ जाती हैं ॥५०॥

ऐ सबसे ऊँचे ! देव-सोकसे भी परे बसनेवाले !! हम बिना घोंसले, पंख बिहीन आकाशके वासी हैं । पवन पानी, धरती और आकाशकी तुम पीछा पहचानते हो । मुझ पदुषी भी प्रार्थना मुनो प्रियतम ! अपनी कृपा-दृष्टिसे हमें कभी बहिष्कृत न करना ।

सानूँ रस सुतेतर बाते,
 बंदी साधो बुर रहे
 परतमतर ना कहे करावी,
 लस बा सबा दाऊर रहे ।
 मुंह तलिये ना कहे कैव बा,
 कहे गुलामी आवे माँ,
 बास बना न सिबमत पावों,
 साडी लुस जुहावों माँ ।
 बूये बे बस पाके सानूँ,
 मन बी भोज गुवावों ना ।
 आजाबी हक तेरा बिस्ता
 सब नूँ बान कराइ तूँ ।
 बूठ प्रभु ए बात न पुस्ते,
 बिसी बई रहाई तूँ ।
 मरखी हेठ किते बी मरखी
 धबरे नास न सगे कबी ।
 जंगल यासा येशक देखों,
 माझी महल न शहर बइ ।
 तन नूँ बजण छुगो मिसे पर,
 लुस कहे ना लस लई ।
 बेगल साडी जोय जितारों,
 हफ हफ दिन पेट भरे ।
 पेट भरे जहि ऊषा रह जये,
 लुस मा साडी कहे मरे ।

सदा हमें स्वतन्त्र रखना । बन्वीखानेसे हम कौसों दूर रहें । पराधीनता कभी न दिखाना । खुले आकाशमें हम सदा अपने पख फड़फड़ाते रहें । कभी किसीके दास न बनें और न ही हमें कोई पिंजरेका बंदी बनाए । दास बनकर कहीं हमारी स्वाधीनता न छिन जाए । परायेक वधमें जाकर हम अपने मनकी मौज न खो दें । स्वाधीनताका जो अधिकार हमें दिया है, वह सबको देना । हमारी इच्छाओंको कोई जबरदस्ती कुछ न सके । न कोई बाधा पहुँचाए । न हमें कोई ठग सके । हम जगहके वासी भले हमें महसूस नगरोकी इच्छा नहीं । शरीरको ढाँकनेके लिए खुशी काफी है, पर हमारी स्वतन्त्रता बनी रहे । भूख ही हम सारा दिन चोगा* चुग चुगकर अपना पेट भरें, या खाली रह जाएँ । हमारी आजादी न छीनमा ।

कसो दस किरावी सानू,
 बासों बाल उडावी सानू ।
 छोके छोके टपाके सानू,
 कौड़े फली रिसावी सानू ।
 बन परबत अस बनी पहाड़ी,
 रेत बल्लों पी देखों तू ।
 खुल जु दिसा हक समस नू,
 बेचे कबी न सेबों तू ।
 आन बान बिल्ल शान असाही
 तेरे साण रसावी तू ।
 प्यार आपणे बाक, प्रभु तू
 बूझी कैद ना पावों तू ।
 बंद करन ते आसण राखी,
 बर्गल बेव करावों ना ।
 पाण पित्ररे बेग चूरिया
 ऐसे सली मिसावी ना ।
 लम्ब असाहे धर असाहे
 बिल साहे नू रोक करे ।
 घरमी ऐसे असा न मेली
 डोर पाय हथ बाण फड़े ।
 लुसे उडरिया भीज फिरदिया
 बाज कि बिल्सा आण पचे ।
 महब बिहूणे राखी बाशों
 कुल सारो बहि माग हुये ।
 जब तब इक असा यों बीबे
 लल विच उस मुबात बहे ॥२१॥

हम वेड़-वेड़, डाल-डालपर फुटकरते रहें। धेन* के बड़ूने फल खाकर ही हम जी सेंगे। बन पर्वत मरुस्थल—कहींपर भी रहेंगे। आजादीका जो अधिकार हम सबको दिया है, वह सदा बना रहे। तेरे सहारे हमारी आम-शान कायम रहे। ऐ भगवन् ! तुम्हारे प्रेमकी कैदके बिना हमें कोई दूसरी कैद न देखनी पड़े। जो बन्दो बनाकर देवताओंके दर्शन कराते हैं, पिंजरेमें डालकर मलीबका प्रलोभन बतें हैं, ऐसे दामबीर हमें नहीं चाहिए। ऐसे घमस्त्रिमा-पुरुषोंकी सगतिसे हम दूर ही भसे हैं जो हमार पछ पर और हृदयको गतिविहीन बना दें और यलमें रस्ती डालकर हाथमें लगाम पकड़ लें। बिस्ती रखवालकी सहायताके बगैर खुम्से आकाशकी उड़ान भरते मौजसे घूमत भसे ही बिस्नी या बाजका दिकार बन जाएँ। हमारे सारे कुसबा नाश हो जाए। जब तक हममेंसे एक भी जीवित है स्वतन्त्रताकी सौम सेता रह ॥५१॥

* प्राक के वेड़ किबल पञ्जाबके ही कुछ मध्यमर्गी जिलोंमें पाय जात है। अन्य भारतीयोंके लिए यह एक अपरिचित शब्द है।

इक अरदास होर हँ साईया ।
 मेहर करीं रे कपूर सुणी
 पशु मसी हीं पशु रखाबीं
 बेशक सखने समम गुणी ।
 उह ना बकस असानूँ देवीं
 उह तहसीब बिबाचीं ना ।
 उह सम्यता दूर रखावीं,
 बिद्या उह सिखावीं ना ।
 जाल पाप ते घड़न पिअरे
 कैंव पाप सिखलावे जो
 खम्ब सोड़ कर बोट बहावे
 बुलिया बन्दी पावे जो
 सोक गुलाम बनाय बहावे
 मुरती कतल करावे जो ।
 तेरे रचे सुततर बम्बे
 परदे ताण मुटावे जो ।
 छुल हरन बी जाण असानूँ
 साईया करे सिपाई ना ।
 पशु मसा मँ चाह रयीं
 मानुष परे बमाई ना ।
 खहे जंगली खहे पशु रण
 बाने चाहे बमाई ना ।
 छुल वचन बी अरन ना देवीं
 छुल छोटण जाण सिराई ना ।
 'छुल रचण' बी गरत देवीं
 छुल छुहणों दाम बिबाणों न ।

एक प्रार्थना और है प्रियतम ! हम पशु हूँ। पशु ही रहूँ, गुणहीन ही भले। हम उस शिखाके गुण कभी ग्रहण न करें, उस सम्यक्तासे दूर रहूँ जो जाल फैलाकर पित्रेका धन्दी बनाना सिखाती है। पक्ष नोचकर जो दूसरोंकी स्वतन्त्रता छीनती है। लोगोंको पराधीन बनाकर बैठा देती है। तेरे पैदा किए स्वतन्त्र मनुष्योंको जो परामे बसमें कर देती है। किसीकी स्वतन्त्रताको छीनना हम कभी न सीखें भल ही जगली कहलाएँ, मनुष्य कभी न बन सकें। स्वतन्त्रता बेचने की बुद्धि नहीं चाहिए। 'स्वतन्त्रता छीनने' के ढग न सीखें। स्वतन्त्र रहनेकी आन और स्वतन्त्रताकी लाज आँखामें बनी रहे।

बुल कइये बुल शान कराइये,
 बुल बे बात बगानी तु ।
 मय भरे ना कहे असाहा,
 गय कहे बिस छाये ना ।
 बुझी रहे मन भरी असाहे
 कय कहे तिर आये ना ।
 पैरत ठरत खून ना बेवे,
 अगल रगा छिन्न रसे जी ।
 भुजा साडियां ताण काय रहे
 अल उचेरो तक्के जी ।
 मोडे लने लाग विष सिधे,
 गरदन आकड़ भरी रहे ।
 खोर रहे हिक साडी भरिमा
 डर जा घीन ना कहे डहे ॥५२॥

ब्रह्म हाथों हय स्वतन्त्रता वीरों, दास कभी न बनें । हमार भीतरकी
 चिनयारी सग सुलगती रहे । कभी साहस न छोड़ें । सदा प्रफुल्ल मन
 रूँ कभी कोई सफ़ट न आए । खूनका जान सदा गरमाए रहें ।
 नम्रोंम बल प्रती रहे । बामू तानकर हम आँख उठाकर देख सकें ।
 शत्रुओंका तनाव कभी डीसा न हो । मर्दन सीधी बनी रहे । हमारे
 चीने और मुनाबोंमें सक्ति बनी रहे । प्रयभीत हो हम कभी गदन
 न मुकारें । ॥३२॥

इसमें शूमारके बलों का एक घाल रसका सुन्दर परिष्कार हुआ है। इनकी रचनाओंमें पारका माधुर्य एक भाषाका अत्यन्त प्रवाह गूढ़ मिलता है।

श्री जगन्नाथ पायप्पा धाम्नी बहुत ही भावुक हैं। करन श्री के अपनाम में य बलिना करते हैं। उरय श्री करन श्री विजय श्री आदि इनके गण्य वाक्य हैं। इनकी रचनाओंमें भाव-गूढ़ पण्ड अपन भाव निर्गन्धों धारासे समान प्रारण है। प्राचीन दीर्घासे नवीन भाषाका लेकर चलनवासी इनकी कविता बड़ी ही सगुन और सरस हुई है। इस बालक अत्यन्त प्रसिद्ध बलि श्री बन्धुल रामनारायण नारी कर्त्तव्य धाम्नी नाथनि गुप्ताचार्य अडिबि बाणियन्तु आदि हैं।

तृतीय उपास-काल

त्रिम प्रकार हिन्दी साहित्यमें उपासकारकी प्रतिक्रियाके रूपमें उत्त्थानीन परिस्थितियाँ के कारण प्रवर्तितवाया आविर्भाव हुआ जैसे ही तैमल्य साहित्यमें भी हुआ। भाव बलिनाकी प्रवर्तितवाये यथार्थवादी कविताका अविर्भाव हुआ।

हिन्दी में महापुरुषों के आरम्भ हमने पूर्व छाने देगमें बलिनाका हाण्डव गूढ़ हाँटा था। बहारी बड़ रही थी। ममायक मध्यम वर्गमें आर्थिक विपन्नताके कारण आयुनि पैदा हुआ। ब्यासक अज्ञानता जीवनक कालिके सामन ज्ञानाकी लक्ष्य छाने रहा था। सर्वत्र ज्ञानाकार मचा हुआ था। स्वयन्वर्तार्थ भाषनाके साथ गन्धाराका आन्दोलन और परत रहा था। बिदेनी सागनका बदन और उलझिन बरम सीमापर था।

इन परिस्थितिकामें बलिना कुछ विफल हो गया। उसने देगा कि बालना के नमारेमें विचरण करनेका अब समय नहीं है। बालनाके आकाशमें विना ही ऊँचा उठा पर रहा तो अवसर ही है। अब यथार्थवादी बलि बालनाके आकाशमें नीचे उतरकर आर्थिक विपन्नतामें निमनवाले ममायका विचरण करने लग्य।

भाम्नीवादी विचारधाराका हम यथार्थवादी बलिनापर विरोध प्रभाव पड़ा। हम आधुनिक बाल्यधाराको प्रामाण्य देनाके लिए अज्ञानाहित्य परिवर्तन की स्थापना हुई जो आम बालक अत्यन्त रचयितक संगम में विनीत हो गई।

हम धाराके प्रसिद्ध बलि श्री यीरकमु यीनिकानरुच है। आप श्री-श्री कि आज उपासामें प्रभाव है। न बलिनाक विरयमें आपसे य विचार है —

उन्होंने बगनोंको

तोड़ बीड़ मिला दाने।

बहु कोई करे मूर्ख है क्या बहु?

तो कहें, यह बलिता है।

हम उर हीन बलिनाके लिए आप न बन्धुधारा आवरण माना है —

लिकुट रवन बन्दन

बन्धुक मध्या राग

बाब-हल-हिरण रत्न,
कापालिक-नयन-ज्वाला
कलकला-कालिका-मिह्रा
बाहिय नब कविताके सिद्ध ।

फिर यह कविता कैसे होगी ? इसका प्रभाव क्या होगा ? वे कहते हैं—

हिलनेवाली, हिलानेवाली
बदलनेवाली बदलानेवाली
सहरो नीबको हटानेवाली
पुनः जीवन प्रदान करनेवाली
है नब कविता ।

यह कवि कैवल्य जालिसे ही सन्तुष्ट नहीं है वह एक नवीन सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्थाकी स्थापनाकी प्रेरणा भी देता है ।

श्री श्री का प्रसिद्ध मुक्त-कव्य-संग्रह महाप्रभावशाली है ।

अतिशक्ति मुष्कारवादी प्रपत्तिवादी विचारधाराका बड़ ही कलारमज्जा बाते व्यक्त करने है । अन्तिमोपाय इनकी कविताओंका संग्रह है ।

बाबू (भागवतुल प्रकर धारणी) प्रसन्नता बाह्यमान करनेवालोंमें प्रमुख है । स्वमेवाहम् नामक पुस्तकमें आपकी कविताएँ संग्रहीत हैं । हात्में ही आपका सितारना नामक लक्ष्म-कव्य प्रकाशित हुआ है ।

श्रीरामम् गायकबाबू अति यथार्थवादी कविताओंके प्रसिद्ध कवि हैं । अति नवीन शैली एवं नवीन विचारधारामें आपकी कविता बलवती है ।

कपालमल्लम् किटकी-लक्ष्मीपम् (विह्वल में दिया) रबिर क्याति आदि आपकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं । आपकी मृत्यु हाल ही में हुई है ।

श्री तैल्लटि मूरि, श्री बल्लकोड़ा रामबाबू, श्री पट्टाभि श्री कुन्नुति आम्बोन्नयनम् आदि हम आपके प्रसिद्ध कवि हैं ।

श्री जलमूर्ध रविमणीनाथपास्त्री पीरोडी (व्यक्त कविता) सिक्कनमें सिद्ध हुए हैं । अजिगन्तु नामक इनका पीरोडी पद्य-संग्रह काफ़ी प्रसिद्ध है ।

हैराबाबूके कविधामें श्री बागवती प्रमुख है । आप सभी प्रकारकी दैर्घ्योमें निपुणताके साथ लिख सकते हैं । आपकी कवितामें सच्चर अर्थोंमें व्यक्तियन धारणाओंका सबसे और स्वाभाविक प्रवाह है । अन्तिमोपाय रचनीया आदि आपने प्रसिद्ध कव्य-संग्रह है । अस्तिष्कम् तो सर्वोत्तरी आपकी एक प्रसिद्ध कविता है ।

सबसे विचार बनायास है कविर्-करमस प्रमुख हुए हैं । बागवती कहते हैं—

है नहीं बहमने

व्याकरणका रेडियेड सिवात तो नीचे बूझ पड़ते हैं

जगताके सामने (मात्र मेरे) ।

बामनाथि नारायण भी नारायण देवही उल्लस लल्लपल्लवाचार्य रामदास मैत्रेयानाथे प्रसिद्ध बलि हैं।

इस प्रकार आधुनिक लेखन बलिना यद्यपि बगला एवं भैरवी साहित्यमे प्रस्तापान्तरण प्राप्त हुई थीं। तथापि भैरवी विद्यापनाओंका उपाख्यान कर भिन्न भिन्न पाठ्यक्रममें प्रकाशित हानी हुई आधुनिक भारतीय साहित्यमें अपन विविष्ट स्थानपर विद्यमान है। बहु भाषाओंमें बन्धु-व्ययनमें दीर्घमें छन्दोंमें आपात नाभ्यन्ते सभी अर्थोंमें एक नवाना केकर उल्लसक बलिप्यकी भार अग्रसर हा रही है।

आधुनिक आग्य साहित्यके नाट्य यश दोनों ब बलि भागवतोंकी अनेका संस्कृत तथा भैरवी नाट्य-परम्परासे अत्यधिक प्रभावित हैं। इनके रचना विमल-विद्यापार मरुत ब भैरवी नाट्य साहित्यका ही प्रभाव परिलक्षित होता है।

१९ वीं शताब्दी उत्तरार्द्धमें धारवाड़क नाट्य समाज आग्य प्रान्तमें धूम धूमरार करती और हिन्दी नाटकोंके प्रदर्शन द्वारा गाथा धूम मचा थी। इन नाटकोंकी सौरभियामें प्रोत्साहित होकर लेखनमें नाट्य रचना करन और उम्ह अभिनीत करानके सिध कुछ उल्लाही युवक वीरानमें आए। प्रत्येक नगरमें एक या दो नाट्य-समाजोंकी स्थापना हुई। वीरानके प्रख्यात आग्य नेता बैराजस कोटा बैराज्यव्या पन्थुन और आग्य केसरी टी प्रजान्ध पन्थुन भी इनमें नाम लेने ब।

लेखन नाटक साहित्यका प्रारम्भिक युग अनुवादात्मक और अनुकृतात्मक रहा है। आधुनिक आग्य साहित्यके प्रसिद्धाकर भी बीरेन्द्रसिंह पन्थुनने पाकुल्लन रमावती बामेश आष्ट अर्धे करिषा अनुवाद किया। अभिज्ञान साकुल्लन के लो लेखनमें कोटी पन्थुनने अधि अनुवाद हुए, पर बीरेन्द्रसिंह पन्थुनना अनुवाद धष्ट माना जाता है। श्री बैरमुबेरदास धार्वीन उत्तर रामचरित और उनके सभी नाटका भी अनुवाद मुम्बारायुवने बेनी लंगर का निर्वात बरन्धपुन्त मुम्बारायण मुम्बाराटिक बाण रामायण का बैदूरि प्रसार शास्त्रीजीन भागवत का रामुभी रामुर्धन भागनी बाधरा भी बिभरमनि लक्ष्मीनारायणने भागक सभी नाटका अनुवाद किया है। इनके अनिर्वात भाग बरन्धपुन्त चौधरी म/अ/ब 'कर्ण मञ्जरी आरिजयजय सभी मञ्जरी नाटकोंका मैत्रेयमे अनुवाद हुआ है। भैरवीने लक्ष्मीनारायण नाटकके ब अनुवाद भी प्रकाशित हुए हैं। बभन और शिर्के नाटकोंके अनुवाद भी हुए हैं। म/अ/बि एवं लक्ष्मी नाटकाक ब अनुवाद हुए हैं जिनमें श्री बरन्धपुन्त वीरान रई के अनुवाद मन्तर हैं। श्री श्री लक्ष्मी नाटका "बन्धुन" "बीना" आदिना भी भाग बामेशर नाटकीन अनुवाद प्रस्तुत किया है।

सन् १८८१ ई में श्री बागड रामबाण बाग्वीन मञ्जरी मधुरीपु भी रचना थी श्री लक्ष्मी मञ्जरी मञ्जरी नाटक माना जाता है। सन् १८७५ म

श्री बाबिकाभा धामुदेव छात्रमीन नृत्यक राज्य भाग्यक मीलिक नाटककी रचना की।

स्वयं मौलिक नाटकोंकी रचनाकर, उनका प्रदर्शन कर, कोरमिथ बनाने वाले प्रथम नाटककार और अभिनेता श्री धर्मचरम रामकृष्णायाम है। इन्होंने बस्कारि नगरमें सरस बिनाचिनी समा की स्थापना की। इस समान भाग्य प्रान्तम प्रथमतः पारसी कम्पनियोंके अनुकरणपर नाटकोंका अभिनय किया। श्री बाबायमीन ३ से अधिक नाटक लिखे हैं और य सभी नाटक अभिनीत हुए चुके हैं। (पन्द्रह नाटक पुस्तकाकार प्रकाशित हुए हैं।) इन नाटकोंकी कथावस्तु यद्यपि पौराणिक हैं, किन्तु घटना-सम्बिधान और कल्पना-चातुर्यके कारण ये नाटक यथेष्ट लोकप्रिय हैं। बिजयनगरीयम् बिषाद सारंगधर, चन्द्रहास बरुमिनी आदि इनके प्रसिद्ध नाटक हैं। अनेकों वृत्तोंमें बिभाजित करना प्रयोग और एपिसोडका बिजना कल्प स्वगत भाषण दुर्लभ आदि परिचर्या नाटकोंके प्रभावसे इनके नाटकोंमें समाविष्ट हुए हैं। बिषाद सारंगधर तेलुगुका प्रथम दुर्लभ नाटक माना जाता है। वर्तमान राजनीतिक धार्मिक और सामाजिक समस्याओंको बाबायमीन अपने पौराणिक नाटकोंमें भी स्थान दिया है। श्री रामकृष्णायामको उनकी अनन्य सेवाओंके कारण भाग्य प्रवेश भाग्य नाटक पितामह के रूपमें याद करता है।

उसी बस्कारि नगरमें एक दूसरे बकीर साहब हुए हैं यही श्री कोलाचलम् श्रीनिवासराव। इन्होंने भी नाटकोंकी रचनाकर उन्हें अभिनीत कराया है। इन्होंने बाजी-बिसाल नाटक समा की स्थापना की। इन्होंने प्रपञ्च नाटक चरित्र (संसारके नाटकोंका इतिहास) लिखा जो एक यथेष्ट परिचयार्थक और आलोचनात्मक ग्रन्थ है। रावसाहबन भी काफ़ी नाटक लिखे हैं। मुनशिनी परिषद बिजय नगर राज्य पठनम् प्रतापनगरीयम् महासभा राज्य इतिहास पादुका फ़्टाभिषेकम् आदि इनके प्रसिद्ध नाटक हैं। बिजयनगर राज्य पठनम् बहुत ही लोकप्रिय हुआ है। मौलिक रूपसे इतिहासिक और पौराणिक नाटकोंकी रचनाके अतिरिक्त राजनीति संस्कृत धार्मिक और सरल नाटकोंके अनुवाद भी प्रस्तुत किए हैं। इन्होंने कुछ सामाजिक नाटक और प्रहसनोंकी भी रचना की है। ये 'भाग्य इतिहासिक नाटक-पितामह' के नामसे प्रसिद्ध हैं।

प्रतापनगरीयम् उपाधी धर्म —य तीन मौलिक नाटक श्री बेन्नु बेकटराव पारसीके हैं। इनमें— प्रतापनगरीयम् आबाचर्यय प्रतापनगरीय और निजनी मुमताजोंके इतिहासमय सम्बन्धित हैं। तेलुगुके इतिहासिक नाटकम अपना बिनिष्ट स्थान रखता है। इस नाटकके रचना-बिनिष्टय अधिक बिजय पात्राजिन भाषा-प्रयोग गूढ़म व्यक्त आदि भाषाके हैं। प्रतापनगरीय धर्म योग्यरायण भाषाके योग्य रायनकी याद लिखता है।

क नाट्य-उत्सव—२

परिचरित न किया होता है। नये उत्थानकी रचनाओंकी सामग्री बहुत कुछ वर्तमान सामाजिक समस्याओंपर ही आधारित है। इसमें केवल यथका ही प्रयोग किया गया है। घापा व्याकरण सम्पन्न न होकर बोलचालकी है। रचना-विधान और रसमञ्चके प्रबन्धपर अधिकाधिक पारचात्य प्रभाव दृष्टिकोणर हाज़ा है।

आचार्य आनन्दके नाटकमें मध्यवर्गीय परिवारोंकी समस्याओंका प्रभाव ख़ासी बिजय मिलता है। सामान्य मनुष्यके हृदयमें वर्तमान परिस्थितिके प्रति परिलक्षित हलचालके समय का आदि मनावृत्तियोंके बिचलपमें भी आनन्द सिद्धहस्त है।

अहंकी (भाइका मकान) कपल (मैंडक) 'मय' आपकी प्रमुख रचनाएँ हैं। कोपले बैकट रामदासने अपने नाटकोंमें सामाजिक पुराधारोंका लक्ष्य बढ़ जोरदार शब्दोंमें किया है। श्री पिनिसट्टकी पत्नी पञ्चु (शर्माग मुवती) में किसान और जमींदारके सम्पर्कका सुन्दर चित्र है। श्री मुष्णिबाबूका 'आनन्द वञ्चन' बीबी भीमन्नाके पालिस, कृष्णराय रामदासके मास्टरजी पुनर्वसन भी अच्छे नाटक हैं। इनके अनिरक्त नरसराय जि मूर्धे प्रथम श्रीराममूर्ति नरसिंहराय आदि स्थापित नाटककार हैं। माना जाता है कि अद्यतन तैलपुमें कोबी हाजी हज़ार नाटक लिख गये हैं।

एकांकी

गन दो बार्कोसि बहु नाटक लिखनकी प्रथा कम होती या रही है और एकांकीयोंका प्रचलन बहुत कम रहा है। मुख्यतया कालेज और स्कूलके नाटिक उत्सवोंके उपसकलमें और भाषिक पत्रोंमें प्रकाशनाय लिख गए इन एकांकीयों पर पश्चिमी प्रभाव अधिक है।

महासक भू पू मुख्य व्यावर्णीय श्री पी बी राजमन्नार तन्मुखे सप्रथम एकांकी-लेखक मान जाय है। इनके एकांकीयोंमें मध्यवर्गीय समाजकी समस्याओं और पुराधारोंका प्रभावख़ासी बिजय मिलता है। 'य भी कैस मरे है?' इत्युत्तर हाथ किसका? आदि श्री राममन्नारक सुप्रसिद्ध एकांकी हैं। श्री मुष्णिपाटी केष्टाचलके अकांकीयोंपर फायरका गहरा प्रभाव है। रवी-मुरयक सम्बन्धका पुरपना दमन और रवीकी कुष्टाओंकी लगे भ विमल्लक मल रूपमें पर बहु ही योगदार गद्योंमें व्यक्त किया है। मल ही आप उनक भावों व सिद्धांतोंमें सहमत न हों पर नाबाभिम्यक्तिई कुशलता प्रभाव और टननिककी लक्ष्यर उन्हें नराहता ही पढ़गा। श्री भमिडिपाटी नामन्नाररायके अकांकी मध्य हृदयमें युक्त पाठकोंको बार-बार पढ़नेके लिए बिजय करते हैं। डा गारेमड रामाराय ऐतिहासिक एकांकी लिखनेमें सिद्धहस्त है। बिम्बा दीनियुक्त मन्नादि विरचनाओं की भी नमरायु मन्नादि अकांकीयों भी अच्छे एकांकी लिखे हैं।

१९४३ के बादके लिन्कोन मयार्थ (अर्जि) क बिचलप की और अधिक ध्यान दिया है। मुष्णिबाबूका उमरगैय्याय व त्रिप्यरिणता इन नये दृष्टिकोणके

बैंकटरमण्ड्याका मधुमाक्षी छत्रहाही गुप्तिनख एतिहासिक उपन्यास है। श्री लेन्टिमूरिका अविज्ञान संवेदियोंके सामयके चरित्रका प्रभावशाली चित्र अंकित करता है।

लेखन समस्याओंको लेकर उपन्यास लिखनक्षेत्रोंमें श्री मुद्राटि बैंकटरमण्ड्या प्रथम स्थान है। भावोंमें वास्तिके साथ चरित्र का रचनाकौशल अपना मानी नहीं रहता। दासिरेगा ब्राह्मणीकम्प अर्चना दीवान आदि भाषके प्रसिद्ध उपन्यास है। श्री छत्रिकाहा हनुमन्तराज आदिम चरित्र का अनुकरण किया है।

हास्यप्रधान उपन्यास लिखनक्षेत्रोंमें श्री मुनि भाविकप्रथम नरसिंहराज मोरारगटि नरसिंह दासकी अलमूत्रम रविमयीबाब दासकी आदि प्रमुख है। नरसिंहराजके उपन्यास घरेलू होने हैं। उनके उपन्यासोंकी नायिका बाल्यम आम्बिके पाठकोंका पुलकित करती रहती है। नरसिंह दासकीके बैरिस्टर पार्वतीराम की एद-नाक बलि पढ़कर हँस बिना नहीं रहा जा सकता।

मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोणोंका आधार बनारस लिखनेवाला नरसिंहदिष्टि बुद्धिमान गार्ग्यक बुद्धिबाबु प्रमुख है। बुद्धिमानक 'दुर्गा' 'स्त्री-वैचन' आदिमें मनोवैज्ञानिक भाव-भाव क्या सम्बन्धन भी अच्छा बन पड़ा है। गार्ग्यकके अंदरे कोन गुनके धर्म आदि उपन्यासोंमें मनके अंदरेका चित्रण हुआ है। धीरे-धीरे रावकोटा विरचनाम गार्ग्य और बुद्धिबाबुने मनोवैज्ञानिकभाषक उपन्यास लिखे हैं।

विनिमयी मुद्राकरके दलना (गोर कैला) धीरे-धीरे उपन्यासोंमें धनी और निर्धन परिवारके जीवनके अंतरकी मुख्यतः लक्ष्य चित्रित किया गया है। नटराज नामक समित भाषा भाषीने धारवा के उपन्यासमें भक्त-मुद्राई आम्बर कीन साथ नामक तीन सामाजिक उपन्यास लिखे हैं। इनमें निम्न और मध्यम वर्गकी समस्याओंका मुद्रा चित्रण हुआ है। अचानक मुद्रा इनकी लगनी नाम की बान् इनमें समुद्र उपन्यास गार्ग्यकी बाकी आचार्य भी।

आजकल जामुनी उपन्यासोंकी बाढ़नी जा रही है। इनमेंसे कुछ अच्छे उपन्यास भी प्रकाशित हुए हैं। आजकल टांगारवा नरसिंह मास्टरविश्वराज अष्ट उपन्यास लिखे हैं।

कुछ महिलाएँ भी उन उपन्यासोंकी रचना की है। जयन्ति नूरमात्री का मुद्राया चरित्र (गोपनिह) मुद्राई लक्ष्मीनरनमास्त्रा गुप्ता अमरुती (नामात्रिक) मास्त्रि चन्द्रिका अष्ट दीवक समुद्रराजा बुरक बटाह आदि इन लिख उपन्यासोंमें हैं।

इन नार्याय भाषाकारे उपन्यासोंके अनिश्चित अर्थ मुद्राई उपन्यासोंके भी अनुवाद हो चुके हैं और हो रहे हैं।

इस प्रकार आन्ध्रका उपन्यास साहित्य विविध उपन्यास-रचनाओंसे सुसम्पन्न है। अनुवाद अनुकरणके साथ-साथ विभिन्न शैलियोंके मौलिक और भेद उपन्यासोंकी भी रचना हुई है। तेलुगु उपन्यासका विदग्ध-साहित्यमें विविध स्थान है। कहानी

यूरोपीय साहित्यके सम्पर्कसे आधुनिक आन्ध्र यद्यपि साहित्यमें आई हुई विभिन्न साहित्यिक प्रवृत्तियोंमें कहानीका विविध स्थान है। पश्चिमी कहानियोंके विविध लिखन-विधान एवं टक्कीकसे सम्पन्न होकर आजकी तेलुगु कहानीकी रचना संसारकी सर्वप्रथम कहानियोंमें हारी जा रही है।* गद्यकी लम्बी विद्याओंका धीमे-धीमे करनवासे बीरेकालिगमर्जीके हाथों केवल हम विचारका ही प्रारम्भ नहीं हुआ। स्वामी मुद्राशा अण्णासवन १९१० में अंग्रेजीमें एक कहानी लिखी थी। उसके बाद आपका नाम मुझार आदि तेलुगु कहानियों लिखकर आपन कथा-साहित्यका भीदवाग किया।

वेदम् बेंकटराय शास्त्रीय भोज-कालिशायकी कथाका जेमे 'बलास पञ्च विवसि और कथा सरित्सागर नामक तीन कहानी-संग्रह प्रकाशित किए। श्री चम्पति स्वामी-गणेशमजीके राजम्बान कथावली 'चमत्कारमञ्जरी' चित्रकथा पुष्पम् आदि कहानी-संग्रह प्रकाशमें आए। प्रार्थन और नर्तनका सामञ्जस्य करने हुए विभिन्न विषयोंको आधार बनाकर लिखनवासे मुझारवादी लेखक हैं श्री बेकरि मिश्रयम शास्त्री। आधुनिक सम्मानपर र्वं छी चोट करने हुए हाम्य प्रधान और बालोपमोसी कहानी लिखनमें सिद्धहस्त य विन्ता रोलितुम्। श्री र्वंपाव मुद्रहाम्य शास्त्रीकी कहानियोंमें तेलुगु कहानीका ठठ रूप परिचितित हुआ है जो पश्चिमी प्रभावसे पड़े हैं। सहज सुन्दर वर्णनाप और यथार्थ चटनाओंको लेकर इनकी एक-एक कहानी समुत्तरी हुई है। केवल वर्णनाप हाथ ही पूरी कहानी लिखना इनकी विशेषता है। श्री उत्तमावन्मल मिश्रमकर स्वामी अश्विनि बापियम् विस्वनाथ सत्यनाथय्य आदि भी सुप्रसिद्ध कर्तृत्ववार हैं। व्यय और चमत्कारसे भरी हुई कहानियोंके लिए प्रसिद्ध हैं श्री कौटिलिगण्डि कुटुम्बराय।

कथावस्तुमें श्रीमंथ भावमें और भाषामें श्री निरुली नर्तनना लानवासे लेखक हैं श्री मुद्रिपाटि बेंकटचलम्। साहित्यिक इतिहासमें विषयवा विन्मव कारी के नामोंमें प्रसिद्ध हैं। विरोधी दलकी नटु आत्मजना सहज हुए श्री जपन भाषपर जलन बने रहे। मुख्यतः वेदम समस्याको लेकर लिखी गई आपकी कहानियाँ काफी प्रसिद्ध हुई हैं।

* श्री पासमुम्मि पद्मराजुकी लिखी 'सूदान नामक कहानी नव १९५२ में विश्व कहानी प्रतिष्ठानियामें द्वितीय पुष्कार प्राप्त कर चुकी है। हाम्यमें श्री भाग्यकी लिखी 'मोरावटीके बूम' शीर्षक कहानीकी भी उल्लेख पुष्कार प्राप्त हुआ है।

श्री मुनिमाधिरयम नरसिंहाचार्यजी कान्तम् तिलम् प्राप्तकी बहुशोके प्रतिनिधि है। आपकी कहानियाँ बलान्न और धान्न दैनिक जीवनको मधुर हाम्यसे भर देती हैं। इन कहानियोंमें बालनम् की भाविता बनाकर गृहस्थ-जीवनका सुन्दर चित्रण किया गया है।

श्री इन्द्रगण्डि हनुमच्छास्त्री और योक्त्रपाटि नरसिंह शास्त्रीन अच्छी कहानियाँ लिखी हैं। इन्द्रगण्डि की धार्मिक भावपूर्ण है ता योक्त्रपाटि की मैत्री भक्ति मार्ग है।

श्री पालयुग्मि पद्मराजने कहानियाँ कम लिखी हैं पर प्रत्येक कहानी अपने बिलिप्त गी एक निम्न प्रसिद्ध है। आपका कथा-कथु सह्य सुन्दर बटनार्थ, बपुर बानीभाव आदिन इसके टेक्नीकमें बार बार लगा लिए हैं। सुपुत्र कहानीमें बिराह लघुका प्रतिरोधनामें द्वितीय पुरस्कार प्राप्त कर लेमगु कहानीको उत्कृष्ट प्रदान किया है।

श्री करम बुधर न कहानियोंमें अरन उपनामको सार्वक किया है। आपकी कहानियोंमें धर्म-य अन्तर्गत पवित्र जीवनकी जीर्णिके साथ-साथ आधुनिक सम्प्रदायके कारण विमनकीके मार्गदर्शने बिच भी मिलने हैं।

श्री गौरीचन्द एक सगल कहानीकार है। मार्क्सिड सत्तावाद और नस्लवादे परदेमें बिर्लन भावनाओंको आग बर ही प्रभावशाली रूपमें व्यक्त करने हैं। एतिहासिक घटनाक्रम सामाजिक परिस्थितियों व्यक्तिकार्य मार्क्सिड गति ब.धवा और हेतुबुद्ध चिन्तन-चिन्तन बनावटका मजबूत रचना करनेवाले हैं श्री गौरीचन्द। सामाजिक और राजनीतिक समस्याओंमें प्रभावित उत्पन्न कारण इनकी कहानियों हृदयकी अनेक सम्पत्तियों अधिक प्रभावित करती हैं।

नई न कहानी लिखकोंमें श्री बुद्धिबाबूका अना बिताष्ट स्थान है। अंग्रेजी प्रामाण्यके पदपर उनके वाक्य आपन अरन कहानी-विशेष परिसर रीतिथोका अत्यधिक अन्तर्गत है। रचनाक्रममें बुद्धिबाबू होनवाने उदात्त आपकी व्युत्पत्तिको बनवाने हैं ता व्याख्याते, आलोचनात्मक आपकी प्रतिभाकी। हृदयके नाद-साथ सम्पत्तिका श्री लालिब क देनमें आग निरुद्ध है। टक्कीकरण कूल अधिकार इनके वाक्य कहानियोंमें बि बलता ता देनमें आग समर्थ है।

आशुभ प्रतिरोध अतिमहत् आदि जनकारी बलता बचार्थद्वारे लेगकीम की प्रती है। श्री एक आग बलुन और श्रीमती पालनी बलुनकी कहानियोंका श्री बिलिप्त स्थान है। सुशासनम रात्र रात्र घण्टिक बलिबाहा बालनरात्र अन्दरेष्ट पादुकिगाम्भिरिताय आपनर अद्भुत इन्धाराय हेतुभास्मि दक्षिणामूर्ति आदि अन्य प्रसिद्ध कहानीकार हैं। श्री बलुनकि बलुनरात्र हास्यमय प्रदान कहानियों निगमन प्रसिद्ध है। आनन्दन आग रात्रिय बलान बलुनकी तादमे आनन्दी रात्रिनिगर व्याख्याते कहानियों निगमन है।

श्रीमती कासिरेड्डी मीतादेवी इतिहास सारम्भती देवी भीमनी (बोंकर) श्री देवीने भी अच्छी कहानियाँ लिखी हैं। नन्दगिरि इतिहासकी यहमूखि मुताबना राणी बामकी राणी आदि सेलिकाएँ अभी-अभी इस क्षणमें प्रवेश कर रही हैं। इनका भविष्य उज्ज्वल दिखाई देता है।

यूरक्षेत्र और अन्य भारतीय भाषाओंकी अनेक अच्छी कहानियोंके सुन्दर अनुवादसे लेखक का साहित्य सम्पन्न हुआ है। बंमसाके सारलक्ष्य और हिन्दीके प्रसन्नरस लेखक कहाना साहित्यके पाठक अत्यधिक प्रभावित रहे हैं।

जीवनियाँ

लेखकमें आत्मकथाएँ और जीवनियाँ भी अधिक संख्यामें लिखी गई हैं। श्रीरेमलक्ष्मण पन्थु और चित्तकमलि सकर्षनरसिंहारावकी आत्मकथाएँ, उनके जीवनकी विषयोंको अच्छेरेख उस समयकी सामाजिक एवं साहित्यिक प्रवृत्तियोंका परिचय देती हैं। आन्ध-केमरी टन्दूरि प्रकाश पन्थु, कोष्ठा बेकटप्यय पन्थु, अय्यरेवर कात्तेवररावकी आदि आत्मकथाएँ साहित्यमें ही नहीं आन्धके वास्तविक जीवनके इतिहासमें विषय स्थानकी अधिकारियाँ हैं। टन्दूरि प्रकाश आर्ष-बीका प्रभा प्रभाकरमु बीसे मुड आत्मकथा नहीं, पर उनका सात्विक जीवनकी अनेक विषयताओंपर प्रकाश डालती हैं।

श्री रेमलक्ष्मण पन्थु और चित्तकमलिजीन कई सुन्दर जीवनियाँ लिखी हैं। स्वामी चिरन्तानन्दकी रामहृण और विवेकानन्दकी बीवनी विषय उल्लेख हैं। इनके अतिरिक्त और भी कई महान् व्यक्तियोंकी जीवन-कथाएँ लिखी गई हैं।

आलोचना

आलोचनात्मक साहित्यके जन्मदाता भी श्री श्रीरेमलक्ष्मण ही हैं। आन्ध के अनेक चरित्र हिन्दी साहित्यमें मियल्लु विनाई के समान ही आन्ध साहित्यके सभी प्राचीन साहित्यकारोंकी अर्चना एवं रचनाओंपर प्रकाश डालती हैं। गुरुदादा श्रीराम मूर्तिकी कवि रचनायें भी एनी ही रचना हैं। इतर उल्लेख्य रचनाओंमें कट्टमल्लि रामल्लिगारेड्डीजी (Sir C. R. Reddy) का कविता-मल्ल-विचारमु वेण्णप्पु बेकट मुडल्लप्पु आर्ष-बीका महाभारत चरित्रमु अनन्तहृण समीचीका बैमना और कारम्भालोडमु पुट्टपति गारामपाचार्यका प्रकाश नायिकाएँ विरचनाय मय्यारायमर्षीका अग्रणी प्रमल कथा-कलिपार्थयुक्ति कोण्ड राम हृणप्यर्षीका महाभारत कविता विमर्शमु टन्दूरि प्रकाश आर्ष-बीका गृणार भीनायमु आदि उल्लेख हैं। साहित्यक इतिहासमें कन्दूरि बेकट नारायणरावका संप्रदाय आन्ध-आद्यमय चरित्रमु टकुमल्ल अय्यणरावका विजयनगर साम्राज्यका आन्ध आद्यमयमु पुट्टपति मीनारामय्यका मय्याय्यसाहित्यकीयुक्त नन्दूरि बेकट रामय्यका इतिहास कविता चरित्रमु निरुहोल बेकटरावकी का 'इतिहासकाल चरित्र उल्लेखनीय हैं। अनुसंधानात्मक दृष्टिमें श्री बी. रामरावका आत्म-

बाइगमयमु' की निवासमें बेंगलबयानीका 'नम्रययुग' की के. भी रामकौटे शास्त्रीका निवास बरिन्द और बैराल की के बीरपट्टरावका आन्ध्र साहित्यपर भंडारीका प्रकार उल्लेख योग्य है। लेखु भापासो उत्पत्ति और विकासपर डॉ चित्पूरी नाथयराव डॉ गच्छि जोगिमोमदासि कोराड रामरुष्मय्या बजाऊ बिन सीतायम स्वामी शास्त्रीके प्रथम अध्या है जिसु लेखगुमें आलोचनात्मक साहित्य सर्वनामक साहित्यकी अनेका बहुत कम है।

हैदराबादमें स्थित आन्ध्र मासिक पत्रिका न भी कई अच्छे पत्रोंका प्रकाशन किया है जिनमें मुख्यतः प्रताप रेड्डीका 'आन्ध्रोंका सामाजिक इतिहास' 'मनमार्ग भाष्यनर दि मन्त्र विद्वान्के भाष्य 'आन्ध्र बाइगमय बरिन्द मणिप्रताप नूननारायण शास्त्रीजीका वाक्यार्थकार लख बिबरण मुख्य है।

निबन्ध रचनामें पानुगच्छि सर्वानन्दसिंहरावके माथी के छद्म भाग (ज। गुडिमनके लेखकके समान व्यवहारमक एवं आलोचनात्मक है।) मुद्गूर कृष्णरावजी (हृष्णा पत्रिकाके प्रसिद्ध लेखक) के बिबर निबन्ध कामराजु लक्ष्मणरावजीक लक्ष्मणराय निबन्धालि 'मस्मम्लिक सीमा' पर धर्मजीके एतिहासिक प्रधान रूप कोराड रामरुष्मय्याजीके भाषा और साहित्यपर मेन प्रसिद्ध है। इनके अतिरिक्त 'माली' 'आन्ध्र पत्रिका' आदि विभिन्न पत्र-पत्रिकाओंमें समकालिक पर बाकी अनेक लेख प्रकाशित होते रहते हैं।

इस प्रकार लेखु साहित्य बीरबकी परिभाषा मध्यम बिबर-साहित्यके इतिहासमें अनेक विविध स्थानका अधिकारी बना हुआ है।

• • •

काद्वरि वेंकटेश्वरराव
और
पिंगलि लक्ष्मीकान्तम
[कवि परिचय]

काटूरि घेकटेश्वररात्र
और
पिंगलि लक्ष्मीकान्तम

• • •

तेनुगु साहित्यके इतिहासमें दो कवियों द्वारा रचा गया काव्य प्रवास-
कालीयम् है। यह पद्य-काव्य मन्त्रि मन्त्र्य तथा मन्त्र-विगत (११वीं शतीका उत्तरार्ध)
मामक दो कवियों द्वारा रचा गया। एक कवि एक चरण कहना तो दूसरा कवि दूसरा
चरण—इस प्रकार ममम काव्यकी रचना हुली थी। इन कविपुष्पके नाम तेनुगु
साहित्यक आधुनिक कालमें कई कविपुष्पोंके दर्शन होते हैं। इन कविपुष्पोंमें
निरादित-वेवट कपुम वेवट पनहुल कपुम, मंदट-पार्पनीवर कपुम वेवट
पत्ति कपुम आदिक नाम दिए जा सकन हैं। यह प्रकार दो कवियोंके मिश्रण,
एक कविके मनात कविता कर्मकी प्रथा सामान्य काव्य प्रवासमें ही प्रचलित है।
यह कई ही कविता माधना है। काव्य-लिपिना ही मही अक्षरान * करन ममम

* महाभारत का प्रकाशक है। अष्टादशम और द्वादशमः। महाभारत में भी लोपादी उगरी इष्टादश (विष और वृत्त) मन्त्र और लक्ष्मण नमः भी आगे बढ़ते प्रथम चरण कहना और अन्त में पूरा भी पद्याकार दिग्गज नुनाता दन्ता है। अष्टादशम में आर्यावर्त आगे बढ़ता नुनाता दन्ता चर्चा या आवाग पुनः चर्चियों की गिनता दन्तरद्वय और आठ चर्चों में चर्चियों एक ही समय एकादश रचना पढ़ता है।

सैकड़ों बर्रांकोके भगस ८ या १०० पृष्ठकोका उनकी इच्छापर विभिन्न विषयोंपर आपु कविता रचकर धर्मी पद्योंका समस्त गुना बैठा था यह कविपुष्पम् । इन कविपुष्पोंमें श्री निरपदि-बैकट बचक (विद्याभक्त तिरुगति शास्त्री और विश्वविद्वत् बैकट शास्त्री) अति प्रसिद्ध हैं । आधुनिक लेखु कवियोंमें उनके बचनमें प्रथम स्थान है ता कई परीस । एक प्रकारसे आपुनिर-नेमपु-बाध्यमाहिरके से तस मूर्ध है जिनके प्रयोगमें नव वैतस्य पैस पडा ।

इन कविपुष्प-क कथप्रतिष्ठ दिव्याने पिगलि-कादूरि-बचि है । एक श्री पियलि सरमीकान्तमजी है ता दूसरे कादूरि बैकटवरराच है ।

श्रीकृष्णदेवरयलके दरबारके मुखियु कवि रिगलि मूरमके बंगके है लक्ष्मीकान्तमजी । लक्ष्मीकान्तमजीका जन्म कृष्णा त्रिमेष्ठ बस्तपलि तालुकेके आतमुब नामक बौरमें १० जनवरी सन् १८९४ को हुआ था । आपकी माताका नाम कुटुम्बम्मा तथा पिताका नाम श्री बैकटएनम है ।

बैकटवरराचजीका जन्म कृष्णा त्रिमेष्ठ कादूर नामक ग्राममें १५ जनवरी १८९२ को हुआ था । आप श्री बैकटकृष्णय्याके पुत्र से पर अपने छोट दादाको गोत्र दिए गए ब । वहीं आप बचक दिए गए ब उन बचकके नाम (माठा-पिना) लक्ष्मम्मा और गोण्डय्या ब ।

लक्ष्मीकान्तमजीके पिता बस्तपलि जमींदारीके आमुदालका में मौबके मुखिया बन जीवनयापन करते थे । लक्ष्मीकान्तमजीने मैट्रिक तक मधनीपट्टणम् के हिण्डू हाइस्कूलमें और एफ. ए (इण्टर) और बी. ए. वहीके मोबल कॉलेजसे किया । १९०९में जब आप अभी कथाम पढ़ रहे ब तब तिरुगति-बैकट कवियोंने मज्जीपट्टणम्में छात्रावधान किया । उसे देखते ही लक्ष्मीकान्तमजीमें कविता करनकी इच्छा पैदा हुई । उसके बाद बैकट शास्त्रीजीसे आधीबोस प्राप्तकर आप लगभग तीन वर्ष तक मुबजीके वहीं रहे । वहीं आपन सरकुत और जाल्य भाषाओंका अच्छा अध्ययन किया ।

सन् १९१९ में बी. ए. पास करनेके बाद आपकी नियुक्ति मोबिल पाठशाळामें जाल्य भाषाके अध्यापकके पदपर हुई थी । चारवर्षके बाद आप उसी कॉलेजमें प्राध्यापक बने । पुन चार वर्ष बाद आप मद्रास विश्वविद्यालयके रिजर्व फेलो बने । तीन सालके बाद तम्बाऊरके छात्ररती गृह-सुस्तकाल्यमें बैठकर आपने कई प्राचीन शास्त्र-पत्र ग्रन्थोंका अध्ययन किया । आपने १९३० में मद्रास विश्वविद्यालयसे एम. ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की । सन् १९३१ में आप जाल्य विश्वविद्यालयके लेखु विभागके आचार्यके पदपर नियुक्त हुए । बहसि जनकाय ग्रहण करनेके पश्चात् छह-छात वर्ष आप आकाशवाणीके विजयवाड़ा केंद्रमें संस्कृत विभागेके निरीक्षक रहे । आजकल आप तिरुपतिके बैकटवरर विश्वविद्यालयमें लेखु विभागके अध्याप एवं प्रोफेसरके पदपर हैं । ६८ में वर्षमें इस पदपर नियुक्त होना आपकी विज्ञता और योग्यताका उत्कृष्ट प्रमाण है । आप केन्द्रीय-साहित्य-अकादमीके भी सदस्य हैं ।

रुद्राक्षमें प्राप्त 'त्रिपर-भारत' का आपन शुद्ध सम्पादन किया और उक्त सम्प्रदायी अपनी एक विद्वत्तापूर्ण भूमिकासे मात्र आन्ध्र विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित करवाया है। श्रीबेदूरि प्रभाकर धारत्री द्वारा सम्पादित 'रमयण रामायणम्' के लिए मिनी भूमिका कदम 'काव्यमञ्जरि' विद्वत्ताको प्रदर्शित करनेवाली है। 'मधुर पण्डित' रामयम् इनके एक सुन्दर हस्त है। जिनमें पण्डितराज जगन्नाथके सुन्दर स्फाटोंका सरल व सरल अनुवाद प्रस्तुत किया है। गीतमी ध्यामनुष आपक साहित्यिक एवं सामाजिकान्तरक मन्त्रोंका संग्रह है। इनके व्यतिरिक्त आपन कई पुस्तकोंके लिए भूमिकाएँ लिखी और विभिन्न पत्र-पत्रिकाओंमें समय-समयपर कई पाणिन्यनुसंधान भी लिखे हैं। आचार्यवर्गमें रहने समय आपन सत्कृतक लगभग सभी नाटकोंके रचना रूपक प्रकाशित किए हैं। युवावस्थामें सफल अभिनयोंके रूपमें भी आप प्रसिद्ध हैं।

बेङ्गलूरराज्यके पूर्वजोंके घरका नाम बलपट्टु था पर जवने वे कादूर में आकर बस गए, तबसे कादूरि कहलाए। बचपनमें ही आपको आपके छात्र शासन पौर में लिया था। आपकी प्रारम्भिक पढ़ाई तो कादूरमें ही हुई। ८ वीं कक्षा तक गुडिबाहामें पढ़कर, कहमि आप महर्षि-पट्टणम् पहुँचि। वही आपको सत्यनारायणमञ्जरि अच्छी मन्त्रि प्राप्त हुई और बेङ्गलूरपिण्ड बेङ्गलूरधारत्रीके सेवारत मुद्रबन्धन प्राप्त हुआ।

स्वयं बहिके मन्त्रोंमें मृगि —

विगच्छि काण्ड मुद्रवि तो

संयातम्पु वेङ्गलूरपिण्डमन्त्रगुरुरूप न

भू गविष्यावृत्ति पावि

वे; गौडोक पछरबन वेनु अपातम् ।

[मुद्रवि विमलि सत्यनारायणमञ्जरि और मुद्रबन्धन वेङ्गलूरपिण्ड बेङ्गलूरधारत्रीकी इरादा ही मुद्र बन्धि बनाया है। इनके परिणामस्वरूप कुछ कविता करके मैं अपनी बुद्धि की बरतना ही दम्भाता हूँ।]

आर सन् ३९ मे ४३ तक महर्षि-पट्टणम् स्थित नारायण बापदके विमलाल बन रहे। उसके बाद आपने आन्ध्रके प्रसिद्ध साप्ताहिक इण्डिया पत्रिका के सम्पादनका भार सम्भाला। सन् ३७ तक महर्षि-पट्टणम् उस समयकी निमाया।

धर्म-शास्त्रज्ञ और बेङ्गलूरराज्यी एक बहिरुद्ध गिण्ड है जिन्होंने अपने वाक्यों की गहरी विमलाल में उसे विमलाल-बेङ्गलूर ही माना है। उनी पण्डितके अनुकूल इन्हें भी सत्यनारायण-बेङ्गलूरर कवि या विमलि-कादूरि बन्धि होता चाहिए था। पर प्राचीन सम्प्रदायके अनुसार कुछ वाक्य तो इन दोनों बहिरुद्ध विमलाल हैं। इनपर नाम तो बलम उल्लाहा लिख गए हैं। तीरधरि मुद्रबन्धनम् गीतबन्धनम् आदि वाक्य दोनोंने विमलाल लिखे हैं और कुछ वाक्य

सैकड़ों दर्पकंठि समस्त = या १० पूछाकाका उनकी इच्छापर विभिन्न विषयोंपर आपु कविता रचकर सभी पद्योंकी जगमे मुना देता या यह कविपुष्पम् । इन कविपुष्पोंमें श्री तिरपति-वेंकट कवच (विद्यालक्ष निरुपति शास्त्री और चन्द्रविन्ध्य वेंकट शास्त्री) बनि प्रसिद्ध हैं । आपुनिक लेखु कविगीत उनके बहुते प्रशंसा पाप्य ह तों कई परोत्र । एक प्रकारसे आधुनिक-लेखु काव्यगाहिपके वे ऐसे मूर्ध हैं जिनने प्रकाशमें नव जैन्य फैल पड़ा ।

इन कविपुष्पक लख्यप्रतिष्ठ विषयोंमें विगलि-वाटूर-कवि हैं । एक श्री विगलि लक्ष्मीकान्तमजी हैं तों हमने वाटूर वेंकटरत्नराव हैं ।

श्रीहृत्पद्मेश्वरयसक बरवारके सुप्रसिद्ध कवि विगलि मुरझके बंशके हैं लक्ष्मीकान्तमजी । लक्ष्मीकान्तमजीका जन्म कृष्णा जिलेके चस्सपत्ति तामनेके अर्तमुद नामक गाँवमें १ जनवरी सन् १८९४ को हुआ था । आपकी माताका नाम बुदुम्बम्मा तथा पिताका नाम श्री वेंकटरत्नम हैं ।

वेंकटरत्नरावजीका जन्म कृष्णा जिलेके कादूर नामक ग्राममें १५ जनवरी १८९३ को हुआ था । आप श्री वेंकटरत्नय्याके पुत्र थे पर अपने छोटे भाईकी गोद दिए गए थे । जहाँ आप बतक दिए गए थे उन बतकक नाम (भाठा-पिता) लक्ष्मम्मा और कोण्ड्या थे ।

लक्ष्मीकान्तमजीके पिता चस्सपत्ति जमीनदारके आमुशलका में गाँवके मुखिया बन जीवनयापन करने थे । लक्ष्मीकान्तमजीने मैट्रिक तक मछनीपट्टनम् के हिगु हाइस्कूलमें और एफ. ए. (इण्टर) और बी. ए. वहीके मोबल कॉलेजमें किया । १९१३ में जब आप श्री कलाम पड़ रहे थे तब तिरपति-वेंकट कविगीतें लक्ष्मीपट्टनम्में छपाबजान किया । उसे देखते ही लक्ष्मीकान्तमजीने कविता करनेकी इच्छा पैदा हुई । उसके बाद वेंकट शास्त्रीजीसे आर्पणार्थ प्राप्तकर आप जगमग तीन वर्ष तक बुदुलीके यहाँ रहे । वहाँ आपने संस्कृत और आन्ध्र भाषामोला अच्छा अध्ययन किया ।

सन् १९१९ में बी. ए. पास करनेके बाद आपकी नियुक्ति मोबिल पाठशालामें आन्ध्र भाषाके अध्यापकके पदपर हुई थी । चारवर्षके बाद आप उधरी कॉलेजमें प्राध्यापक बने । पुनः चार वर्ष बाद आप मद्रास विश्वविद्यालयके रिचर्स फेलो बने । तीन सालके बाद तम्ब्याऊरके सरस्वती महा-पुस्तकालयमें बैठकर आपन कई प्राचीन साध-पत्र ग्रन्थोंका अध्ययन किया । आपने १९३३ में मद्रास विश्वविद्यालयसे एम. ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की । सन् १९३१ में आप आन्ध्र विश्वविद्यालयके तेलुगु विभागके आचार्यके पदपर नियुक्त हुए । वहाँसे अनकाय ग्रहण करनेके पश्चात् छह-सात वर्ष आप आकाशवाणीके विजयबाड़ा केन्द्रमें संस्कृत विभायके निरीक्षक रहे । आजकल आप तिरपतिके वेंकटेश्वर विश्वविद्यालयमें तेलुगु विभागके अध्यक्ष एवं प्रोफेसरके पदपर हैं । १८ वर्ष वर्षमें इस पदपर नियुक्त होना आपकी विद्वता और योग्यताका अत्यन्त प्रमाण है । आप कैब्रीन-साहित्य-अकादमीके भी सदस्य हैं ।

सम्पादकर्म प्राप्त 'डिपच-भाण्ड' का आपन सुष्ठु सम्पादन किया और उक्त पत्रिका अपनी एक विज्ञापार्थी भूमिकाके साथ आन्ध्र विश्वविद्यालय हाउ प्रकाशित करवाया है। श्री बैदूरि प्रभाकर शास्त्री द्वारा सम्पादित रंगनाथ रामायणम् के लिए लिखी भूमिका लक्ष्मी-कालमञ्जीर विज्ञप्ति को प्रदर्शित करवाती है। 'मधुर पण्डित-रायम्' इनकी एक सुन्दर कृति है। जिसमें पण्डितराय जगन्नाथके सुन्दर स्तोत्रोंका संग्रह व हरम अनुवाद प्रस्तुत किया है। गीतगी व्यागमुक्त आपक साहित्यिक एवं अलोचनात्मक मन्त्रोंका संग्रह है। इनके अनिरुक्त आपन कई पुस्तकोंके लिए भूमिकाएँ लिखी और विविध पत्र-पत्रिकाओंमें समय-समयपर कई पाण्डित्यपूर्ण लेख भी लिखे हैं। आकाशवाणीमें रहने समय आपन संस्कृतके लगभग सभी नाटकोंके रेडियो रूपक प्रसारित किए हैं। मुंबईस्थानमें सफल अभिनयाक रूपमें भी आप प्रसिद्ध हैं।

बैदूरिचरणरायके पूजनीय घरका नाम 'कलपटु' था पर जबसे वे कादूर में आकर बस गए, तबसे कादूरि कहाए। बचपनमें ही आपको आपके छोटे दाशने और ल किया था। आपको प्रारम्भिक पढ़ाई तो कादूरमें ही हुई। ८ वी कक्षा तक गुडिवाडामें पढ़कर, वहीं आप मछलीपट्टणम् पहुँचे। वहाँ आपको लक्ष्मीकालमञ्जीर, लक्ष्मी संगति प्राज्ञ हर्द और वैदूरिपिण्ड बैदूरिशास्त्रीकी सेवाका मूलभूत प्राप्त हुआ।

स्वयं कविक दाशमें मुनिए —

पिण्डि काण्ड मुनि तो

समाप्तम् वैदूरिपिण्डमङ्गुरहृष न

धुं गविमात्रुनि गवि

ये योडोक पदारथन केन जगन्मन् ।

[मुनि पिण्डि लक्ष्मीकालकी मयि और मुन्ना बैदूरि-पिण्ड बैदूरिशास्त्रीकी इगन हा मुन कवि बनाया है। इसीके परिणामस्वरूप कुछ कविता करके मैं अपनी बुद्धि की चमत्कार है। दृष्टान्त है।]

आन सन् ३९ स ४३ तक मछलीपट्टणम् स्थित मगलक कालेजके प्रिन्सपाठ बन रहे। उसके बाद आपन आन्ध्रवी प्रसिद्ध साप्ताहिक इन्दुना पत्रिका के सम्पादनका भार सम्भाला। सन् ३२ तक मछलीपट्टणम् तक उस कार्यकी निभाया।

लक्ष्मीकालमञ्जीर और बैदूरिचरणरायकी लम्बे कविपुष्पके शिष्य हैं। जिन्होंने अपने कामकी विनी एकद जिननर भी उये विरपति-बेकटीय ही माना है उनी पाप्मणके अनुकूल रहे थी लक्ष्मीकाल-बकस्वरकवि या पिण्डि-कादूरि कवि हाता काटिए था। पर प्राचीन मन्त्रदायके अनुकूल कुछ काव्य तो इन दोनों कवियों मिलकर लिखे हैं। उनपर नाम ता अल्प-अल्प ही मिले पए हैं। तापदरि, मुनिर-संग्रह, सौन्दरानम् आदि काव्य शीर्षोंमें मिलकर लिखे हैं और कुछ काव्य

और रचनाएँ अलग-अलग लिखी हैं। आपन अपनी रचनाओंमें परम्परा और युगोंतर अन्धा भावके साथ अपने व्यक्तित्वका भी सामना रखा है। प्रस्तुत कैमल भी कादूरि वेण्कटरायनजीपर ही लिखना है फिर भी कठम्री-कालमर्जी के बिना वेण्कटरायनका पुन परिचय नहीं दिया जा सकता। अन्त दोनोंका परिचय और दालि काल्यों (वेण्कटरायनजीकी रचनाओंके अतिरिक्त) से उत्तरण दिए गए हैं। इन दोनों कवियोंके संगमन कालांतरमें बन्धुत्वका रूप धारण किया है। कालमर्जीकी बहुनकी मङ्गी पिण्डिके सामेकी पत्नी है। पर इन सम्बन्धकी अपेक्षा उनका साहित्यिक मन्त्र प्रगाढ़ है।

ऊँचा कर बाबाजू बाहु चौध घरीर, कर्म्मरि केहण नीकवार नाक
बनी छकर मूँछ मोटे कमरा बरमा बनी भीहें छल-छल कैनासे मुक्त पञ्जा छिर,
हाथमे ताड़की बनी छडी पौबीमे पण्डिताऊ कप्यल गार्डीका कुनी कम्पपर काश्नीरी
घाल या घारीदार लार्डीका उत्तरीवि मूँहम कर्म्मरि उभायुका सम्भा-पनता पुस्त—
संक्षेपमें यह कादूरिजीसे बाह्य स्वरूप एवं उनकी बेमसूपाका वर्णन है।

—(वे पञ्चाङ्गप्यमूर्ति)

२ भी शरीके प्रारम्भमें अष्टमं पद्वयम् आगच्छी साहित्यिक अर्थ राक्षनीति
केतनाका केन्द्र बना हुआ था। स्व पद्वयि संज्ञासम्बन्धा मदनुरिङ्गणराय वेण्कट
सास्त्री जैसे प्रसिद्ध व्यक्ति उसी नगरमें पैदा करते थे। वहींपर कादूरिजीके जीवनका
अत्यधिक भाग बीता। आपका जन्म बूँकि एक घनी परिवारमें हुआ था अतः आपके
सामने आर्थिक समस्या कर्ष नहीं रही। अठहूयोप-आर्मोप्पनमें माग केनक कारण
आपन पढ़ाई छोड़ दी। सन् १९३३ के सत्याग्रहमें सक्रिय हुआ था या आए। आपकी
रचनाओंपर गार्डीकाका प्रभाव है। राक्षनीतिके बाव साहित्य जगत ही उनका
सर्वस्व बन गया। 'कुम्मा' पत्रिकाका सम्पादन करने समय आन्ध्र प्रदेशके कई नगरोंमें
साहित्यिक भाषण देकर आपन अपनी विद्वत्ता एवं प्रभावशाली भाषासे लोगोको
मुग्ध कर लिया था। १९४३ में जब साहित्य परिषदके ऐनामी अधिवेशनमें उभा
पतिके पहले कादूरिजीन जो भाषण दिया उसका साहित्यमे एक बिशिष्ट स्थान है।

रचनाओंके परिणामकी दृष्टिसे कादूरिजीकी कविताओंकी संख्या अधिक
नहीं है। पर आपन जो कुछ भी लिखा उसने साहित्यमें अपना महत्वपूर्ण स्थान बना
लिया है। कादूरिजीकी अपनी निजी कृतियाँ पीसस्य हृदयम्, पुडियण्डल
(मन्दिरकी चट्टियाँ) 'मावाळु, पाऊर' (मेरे लोन मेरा गाँव) हैं। इनके अतिरिक्त
समय-समयपर पत्रिकाओंमे प्रकाशित कविताएँ हैं। पिण्डिक-कादूरि कवियुगके
नामपर १९२३ में तालकुरि (प्रथम वर्षके दिन) नामक कविता-संग्रह प्रकाशित
हुआ। आन्ध्र साहित्यमे इस कविद्वयको अमरकीर्ति लेखाखर काव्य सौन्दर्यमय
है जिसका प्रकाशन सन् १९३४ में हुआ था। यह काव्य भी वेण्कटसास्त्रीकी पठि-
पुतिके समारोहके समय गुरु-दलियाके रूपमें उनके चरणकमलोमे समर्पित किया गया
था। मञ्जरीपद्वयम्के गायरिकोके जीवनमें तिरपति-वेण्कट कवियोंके प्रति अन्धा-भक्तिते

प्रति लोगों द्वारा सम्पूर्ण यह समारोह आन्ध्र साहित्यके इतिहासमें ही एक रमणीय एवं अविस्मरणीय घटना है। इस समारोहमें कई कविशिष्योंन काव्यके उपहारोंके रूपमें अपनी मुरु-वसिष्ठा चुकाकर, अपनेको धन्य माना। इस प्रकार समर्पित मीनर नन्दम्, तैम्पु-नारबाकी सेवामें प्रसन्न अपूर्व कुसुम है—

पुष्पिरेकुलु तल्लङ्गुल मोर्षण
नयिषु काम्प मङ्गुबाहु
अत्यन्तुतैवैन यवघानविघातु
कमवकारमैव प्रतिमबाहु
मीनुरोयिकि वैने सोनलु नयिषु
बाह्यमाधुरिकि वेव नदिनबाहु
चिन्नाये वल्लि नयिषु कविताकम्प
नेक पत्तिनय नैसि येम्बुबाहु
पुर्णकामु त्वागिषु मोयिवैन
गुदनि कयमोगुपौटेनी चिस्त कम्प
महंत मदिषुकोनगाक यागप्रवाचि
कडकमुल आल्लोनु प्रसादकनल्लवाप्ति।

[चरनोमें नव राजाकी सादर समर्पित भेंटका स्वीकार करनेवाले
अवधान नामक आंगुलविता-पाठका नम प्रचसित करनेवाले

राजोंमें मनु वरमानवाले बाहुमाधुर्यक लिए प्रसिद्ध

वचनमें ही वरन कर आनवाली कविता-कम्पापर एक-वली सम घासन
करनेवाले

पुर्ण काम त्वामी और मोयी जो हमारे गुरु हैं,

उनके आज्ञासे उच्छ्रित होनेके लिए यह छाट-सा काव्य आन्ध्र-सरस्वतीके
नयन-कोराका प्रसाद प्राप्तकर माघन बनें।]

पीकल्प हृदय गुडिगच्छु मरे नोय मेरा गीत इन तीन कविता
ओंकी एक सप्ताहके रूपमें प्रकाशित किया गया है। इस काव्य-अष्टहकी कविन अपने
बड़ भाई स्वर्णवामी रामकृष्णव्यासीकी दिव्य स्मृतिमें समर्पित किया है। भर-मूर्ध्नी
बाल-बन्धे लर्नी-बाई किर्नपर ध्याल रिण बिना बुदबकड़ बन घूमन एनबाल इस
छोटे भाईका बड़ भाई बिना किर्न पिनायलके कालन-यासन किया बा।

मनु दीर्घक प्रथम कवितामें कविन बड़ी दिनसत्राके साथ अपना परिचय
दिया है। इन पंक्तियोंको पढ़नेसे कविनी नयताका ही नहीं अति महुदयता एवं
ईमानदारीका भी पता चलता है।

क तैम्पु बादूरि—१

मेरे लीज मेरा माँव शीघ्रक कवितामें लिखूँ जलते मुक्त हलके लिए, कादूरिजीने अपने बंगला और अपने ग्रामका हृदयवम वर्णन किया है। उन्होंने कहा है —

अप्रत्यक्षमुगा नाकु नमिनीष्टि
कवनतेग्रामु मद्रसकपनमुन मु
तार्थमयु नकु नहान इतमुषी पि
तृणमारम्भरंजु नृहिकीर्ति ।

[सङ्ग्रह हीमें प्राप्त योड़ी-सी कविता करनेकी सामर्थ्यको अपन बंगलवनते हृतार्थ बनाता चाहै। वह भी साक्षात् कि इससे लिखूँ जलते उक्तय हा मर्क्या।]

इस प्रकार इस कविताके अन्तर्गत कविने अपने परिवार और अपन बन्धु बान्धवोंका काम्यमय परिचय दिया है। कादूर ग्राममें आनेमें पहल इनके बरका नाम* कलपट्टु था। कादूरमें आकर नृजिरीङ्के राजाके आदेशानुसार उस गाँवमें पटवारीक पदका निर्वाह करने लगे। तबसे कादूरि कहलाए। इन कवितामें गाँवके परिवारवालोंकी आपसी मित्रता सौम्यता और सौहार्दका सुन्दर वर्णन किया है। यह वर्णन न केवल उनके परिवार तक सीमित है, अपितु पारबाण्य प्रपादके स्पर्शमें न आनवासे प्रत्येक कार्याय आदर्श परिवारके लिए लागू होता है।

प्रस्तुत कवितामें ग्रामा जन्ममय मानते हुए भी हृदयमें उमड़नेवासी बैरनाके मारे गाँवकी प्राचीन बसा सम्प्रदाय प्रपाएँ और वर्तमान परिस्थितियोंका प्रभावगामी चित्रण किया है। इस कवितामें प्राचीन गाँवोंकी सम्प्रदाय सम्मिलित प्रपास परस्परके सौमनस्यके साथ वर्तमान अवगति स्वाधेपरायणताका हृदयद्रावक वर्णन किया गया है। कविके पुत्रज आन्ध्र साहित्यमें 'प्रवन्धपरमेस्वर' और 'छम्पुवाच' के नामसे प्रसिद्ध एरन के बंगला प। ये लोग पहले बहन्नाडा में रहते थे वहाँ से कलपट्टु और फिर कादूर पहुँच गए। यह गाँव पहले बहुत गरीब स्थानों में था। लेकिन अँग्रेज शासकोंके कृप्या नदीपर (मित्रवशाङ्काके पास) बाँधका निर्माण करते ही उस प्रान्तकी नामापाकृत हो गई। भूमि उपजाऊ बनी और सोना उगलने लगी। कृप्याकी नहरोंसे पानी कादूर तक पहुँचा। इस तरहसे भागों किसानोंका पुष्प प्रवाह ही नहरोंसे होकर बहने लगा हो। फलतः कादूर अब सम्प्रीका निवास बन गया। इस गाँवके सभी बुलवासे मिलजुलकर रहते और गाँवकी उन्नतिमें बिना किसी सन्देहके हाथ बँटाते। कविने प्रातःकालमें नींदसे जागनेवाले गाँवका बड़ा ही सुन्दर वर्णन किया है। चारों बगोंके लाल आपसमें एक परिवारके छोपों-जैसा वर्तन करते। छम्पुमय यह देखकर आश्चर्य होता है कि उस समयकी और आजकी परिस्थितियोंमें फिदना अन्तर का क्या है।

*आन्ध्रमें प्रत्येक परिवारका अपना एक बंश नाम होता है जिसे 'बरका नाम' (Surname) कहते हैं। प्रत्येक व्यक्तिके नामके पहले बंधक नाम जोड़नेकी प्रथा है।

एकले बहुकृत आधुनिकता विरिधि
पंचकोलकथाय नृपतिरुमेत ?

[प्राचीन जीवनका वह साध माधुर्य बिगड़ गया और हाथ । यह पञ्चमल-
नपाय कहमि टपक पड़ा ?]

उस समयक लोग पाप कर्म न करते रहें। ऐसी बात नहीं है। पर उस पापका
तट-तटके मिटानोंकी आहमें छिपाना या उनीकी पुण्य कर्म मित्र करना उन्हें
न आता था। भारतीय प्राचीन जीवनक आदर्श ही कदा-कालन होने गए—इसे
देवदत्त कविता हृदय स्पष्ट हो उठा और उन मुक्तमय दिनोंका स्मरण कर कविता
कोमल हृदय द्रवित हो उठा।

इस प्रकार कवितामें पारिवारिक जीवनकी गरिमा भारतीय जीवनके आदर्श
और बिगड़ नये आन्दोलने प्राचीन और पारिवारिक जीवनका प्रभावशाली वर्णन
किया गया है।

इस तथ्यमें कोई अतिशयोक्ति नहीं है कि भीष्मचन्द्र आन्ध्र आठिके
प्रियतम भगवान् हैं और उनकी माया परमदय रही है। क्या माहितमें क्या हैनिक
जीवनमें—वही मुनिप बही वह पवित्र नाम प्रतिष्ठापित हुना मुनाई पड़ा। राम
चन्द्रजीने जनमानस और बर्षोंकी अविश्रित अविश्राम भाव आन्ध्र प्रदेशमें दण्डकारण्य
और दोहादरीक विजारापर ही बिताया था। उस पावन-स्मृतिको आवृत्त करनेवाले
जनक म्याल और चिह्न आद्य रूपमें यत्र-तत्र दृष्टिगोचर होने हैं। मर्यादा-पुरयोत्तमकी
पुनीत माया मानवाक महानुभावोंने आन्ध्र-साहित्य मध्य पड़ा है। बादुरिजिन भी
रामकी मायाकी एक नए रूपमें पाया है।

पादचाल्य प्रभावके कारण हमारा हेतुक कई मनीषियोंने पौराणिक माया-
को नए रूपमें देखने और चिन्तित करनेका प्रयास किया है। इनमें बंसाकक माइकेल
मधुसूदन दत्तका नाम सर्वप्रथम लिखा जाना है। पर इन स्मरणों प्राचीन संस्कृतिकी
विचार-धाराक बिन्दु कुछ कल्पनाएँ की हैं कुछ बाध रहे हैं पर बादुरिजके
राजपका अरिभ भारतीय विचारधाराके अनुकूल ही है। राजपके पिता पुस्तक
परम निष्ठावान और आनीक। वे ता माछान् बह्या थे। ऐसे पुस्तकका पुत्र है
राजप। उसका हृदय अपन पिताके आत्मज्ञानमें प्रदीप्त था। कविन पौनसप
हृदय नाम रखकर ही बाध्यक इस पहलुपर पाठकोंकी दृष्टि आकर्षित की है।

राजप किष्ण भगवानके उस परममन्त्रोमें या जी औरमात्रम तीस जगोंमें
ही भगवानके साभिष्यकी प्राप्तिका उलट अभिप्राय था। पुण्यके अनुसार राजपके
जन्मका वृत्तान्त इस प्रकार है। जनकसमयम आदि ब्रह्मणि एक बार भगवानके
दर्शन करने बैसुष्ट पहुँचे ता जय-विजय नामक द्वारपालान उन्हें अन्दर जानसे रक्ता।
अभिषेक कउ होकर पाप दिया कि तुम दोनों पृथ्वीपर जन्म लो। जय-विजय
दोनों पिङ्गमिडाने सज इसनेमें भगवान भी आए। तब अपिषेक पाप विधीनका

मेरे भोग मेरा गाँव शीर्षक कवितामें गिनु आगत मुख झलक सिपु,
कादूरिजीन अपन बंका और अपने ग्रामका हृदयगम बगन किया है। उन्होंने कहा है —

अप्रत्यक्षमुखा नाकु नखिनदि
कबलतेसम्पु महुंशकपनमुन गु
तार्कमनु मंशु नहान बलगुबोपि
गुलमारम्भदंशु नृहिबिकीटि ।

[सङ्ग्रहीमें प्राण बोझी-सी कविता करनेकी सामर्थ्यकी अपन बंशकवनसे
इतार्क बनाना चाहा। यह भी मोषा कि इससे किनु आगते उच्छल हा मईया।]

इस प्रकार इस कविताके अन्तर्गत कविन अपन परिवार और अपन बन्धु
बांधवाका काव्यमय परिचय दिया है। कादूर ग्राममें जानसे पहले इनके घरका
नाम* कम्पटपु था। कादूरमें आकर नृबिबीकुके राजाके आदेशानुसार उस गाँवमें
पटवारीके पदका निर्वाह करते रहे, तबसे कादूरि कहलाए। इस कवितामें गाँवके
परिवारवालोंकी आपसी मित्रता सौम्यता और सौहार्दका सुन्दर वर्णन किया है। यह
वर्णन न केवल उनके परिवार तक सीमित है, अपितु पाश्चात्य प्रभावक सम्पर्कमें न
जानबाले प्रत्येक भारतीय आर्य परिवारके लिए लागू होता है।

प्रस्तुत कवितामें शाखा वंशमय मालत हुए भी हृदयमें उमड़नेवाली
वेदनासे मारे गाँवकी प्राचीन बड़ा सम्प्रदाय प्रचार और वर्तमान परिस्थितियोंका
प्रभाववाली विमर्श किया है। इस कवितामें प्राचीन बाँवकी सम्प्रदाय सम्मिलित
प्रवास परस्परके सौमनस्यके साथ वर्तमान अवस्थिति स्वार्थपरताका हृदयद्रावक
वर्णन किया गया है। कविके पूर्वज आर्य साहित्यमें 'प्रबन्धपरमेस्वर' और 'धम्पुराव'
के नामसे प्रसिद्ध एतल के वंशज थे। य लोग पहले चरखाबा में रहते थे वहाँ
से कम्पटपु और फिर कादूर पहुँच गए। यह गाँव पहले बहुत गरीब बंधामें
था। लेकिन अंग्रेज शासककि कृष्णा नदीपर (विजयवाड़ाके पास) बाँवका निर्माण
करते ही उस प्रान्तकी कायापालट हो गई। भूमि उपजाऊ बनी और सोना उत्पन्न
लगी। कृष्णाकी महरोसे पानी कादूर तक पहुँचा। इस तरहसे मार्गे किसानोंका
पुष्प प्रवाह ही नहरसे होकर बहने लगा हो। फलतः कादूर अब लक्ष्मीका निवास
बन गया। इस गाँवके सभी कुलवाले मिलजुलकर रहते और गाँवकी उन्नतिमें बिना
किसी भेदभावके हाथ बँटाते। कविने प्रातःकालमें भीरसे जानबाले गाँवका बड़ा ही
सुन्दर वर्णन किया है। चारों बनोंके लोव आपसमें एक परिवारके लोदी-बैसा कर्ताब
करते। सबमुच यह देखकर आश्चर्य होता है कि उस समयकी और आजकी परि
स्थितियोंमें कितना अन्तर आ गया है।

*आर्यमें प्रत्येक परिवारका अपना एक वंश नाम होता है जिसे 'घरका नाम'
(Surname) कहते हैं। प्रत्येक व्यक्तिके नामके पहले वंशका नाम जोड़नेकी
प्रथा है।

पस्ते ब्रह्मकुल भाधुमेस्स विरिणि
पचकोलकवाय मुप्पतिल्लेस ?

[प्राचीन जीवनका बहु सारा माधुर्य बिगड़ गया और ह्रास ! यह पञ्चमम-
वयाम बहीम टपक पड़ा ?]

उस समयक लोग पाप कर्म न करने रहे हों ऐसी बात नहीं है, पर उस पापकी
तण्ड-तण्डे मित्राओंकी आँखों छिपाना या उनकी पुण्य कर्म छिड़ करना उन्हें
न माना था। भारतीय प्राचीन जीवनक आदर्श ही हमेशा अचल रहने गए—इसे
हेलकर कबिचा हृदय व्यसित हो उठा और उस मुक्तमय दिनोंका स्मरण कर कबिचा
कामल हृदय द्रवित हो उठा।

इस प्रकार कबिचामें पारिवारिक जीवनही गरिमा भारतीय जीवनके आदर्श
और विषय अपन आन्धके प्राचीन और पारिवारिक जीवनका प्रभावशाली बलन
रिखा गया है।

इस तथ्यमें कोई अतिशयोक्ति नहीं है कि भीषमचन्द्र आन्ध आनिक
प्रियतम भगवान हैं और उनकी माया परमपम रही है। क्या साहित्यमें क्या दैनिक
जीवनमें—यहाँ मुनिए, यहाँ बहु पवित्र नाम प्रतिष्ठापित हुना मुनाई पड़या। राम
चन्द्रजीन बनबानके बीरह बघोंकी अवधिचा अधिकाश भाग आन्ध प्रथममें दण्डकारण्य
और सीताचरीके बिनारागर ही बिनाया था। उस पावन-स्मृतिकी ज्ञानून बनबाने
मनक स्थान और चिह्न आन्ध दृष्टमें यत्र-तत्र दृष्टिर्पावन होने हैं। मर्यादा-पुरपातमकी
पुनीत गाथा बानबान नहुनुभाषोंमें आन्ध-साहित्य मर पड़ा है। कादूर्जीन भी
रामकी मायाकी एक नए कपमें गाया है।

पारवात्य प्रभावके कारण हमारे देशके कई मनीषियों पौराणिक मायाओं-
को नए रूपमें बनन और चिह्नित करनेका प्रयास किया है। इनमें बंयालके माहुरन
मधुसूदन बनबा नाम सर्वप्रथम मिया जाता है। पर इन सेनकोंन भारतीय संस्कृतिकी
बिचार-धारके बिबर कुछ कल्पनाएँ की हैं कुछ काव्य रच है पर कादूर्जीके
रावणका चरित्र भारतीय बिचारधारक अनुकूल ही है। रावणके पिता पुलस्त्य
परम निष्ठबान और जानी था। वे तो मायाज् ज्ञाता था। एमे पुनस्त्यका पुत्र है
रावण। उसका हृदय अपन पिताके आन्धज्ञानमें प्रीति था। बनिन पौनस्त्य
हृदय नाम रखर ही। काव्यके इन परम्परा पाठकोंकी दृष्टि आकर्षित की है।

रावण बिष्णु भगवानके उस पश्यमकर्मोंमें था जो वैष्णवधर्म तीन जन्मोंमें
ही भगवानक मासिष्णकी प्राप्तिचा उन्कट अभिप्रायी था। पुराणोंके अनुसार रावणके
जन्मका वृत्तान्त इस प्रकार है। मनबलनगर आदि ब्रह्मपि एक बार भगवानके
हार्न करने ईशुष्ट पर्वेच ता जय-विजय नामक द्वारपावने उन्हें अन्दर जानम रोका।
अधियोंन अछ होकर माय दिया कि तुम दोनों पुष्पीपर जग्न ता। जय-विजय
शानों विह्विह्वल मग इनमें भगवान भी आए। तब अधियोंन माय विमोचनका